

स्मृति - सन्दर्भः

श्रीमन्महर्षिप्रणीत धर्मशास्त्रसंग्रहग्रन्थः
कपिलादिदशस्मृत्यात्मकः

पञ्चमोभागः



नाग प्रकाशक
११ ए/यू. ए., जवाहर नगर, दिल्ली-७

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ स्मृतिसन्दर्भस्थ पञ्चमभागे सङ्कलित- स्मृतीनां नामनिर्देशः

| स्मृतिनामानि | पृष्ठाङ्काः |
|-----------------------------|-------------|
| ४५ कपिलस्मृतिः ... | २५२६ |
| ४६ बाधूलस्मृतिः ... | २६२३ |
| ४७ विश्वामित्रस्मृतिः ... | २६४५ |
| ४८ लोहितस्मृतिः ... | २७०१ |
| ४९ नारायणस्मृतिः ... | २७७० |
| ५० शाण्डिल्यस्मृतिः ... | २७६३ |
| ५१ कण्वस्मृतिः ... | २८६० |
| ५२ दाल्भ्यस्मृतिः ... | २८३३ |
| ५३ आङ्गिरसस्मृतिः नं० २ ... | ... |
| (क) ” पूर्वाङ्गिरसम् ... | २८४६ |
| (ख) ” उत्तराङ्गिरसम् ... | ३०६५ |
| ५४ भारद्वाजस्मृतिः ... | ३०८५ |

विशेष द्र०—द्वितीयाङ्गिरसस्मृतेर्विषयवैशिष्ट्येन पृथगुपन्यासः

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

स्मृतिसन्दर्भ पञ्चम भाग

की

विषय-सूची



कपिलस्मृति के प्रधान विषय

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|---|-------------|-----------|
| कपिल-शौनक-सम्वादवर्णनम् | | २५३६ |
| कपिल एवं शौनक में परस्पर वेद विषयक चर्चा। यहीं वेद निन्दकों का प्रकरण भी आया है (१-२०)। | | |
| वैदिककर्मणामभावकथनम् | | |
| वैदिक कर्मों का अभाव कथन (२१-४०)। | | |
| वेदमन्त्राणां व्यत्यासेनोच्चारणेदोषकथनम् | | २५३४ |
| वेदमन्त्रों के व्यत्यास से उच्चारण करने में दोष होना (४१-५०)। | | |
| श्राद्धप्रकरणवर्णनम् | | २५३५ |
| श्राद्ध प्रकरण का वर्णन, नान्दीमुख श्राद्ध की प्रधानता, विभिन्न श्राद्धों का सुन्दर वर्णन (५१-३००)। | | |

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|---|-----------|
| | उपनयनसंस्कारवर्णनम् | २५५७ |
| | उपनयन संस्कार का वर्णन (३०१-३३३) । | |
| | ब्राह्मणादिवर्णानामेकपङ्क्तौभोजननिर्णयवर्णनम् | २५५६ |
| | ब्राह्मणादिवर्णों का एक पङ्क्ति में भोजननिर्णय वर्णन (३३४-३५०) । | |
| | विप्रमहस्त्ववर्णनम् | २५६१ |
| | विप्रों के महस्त्व का वर्णन (३५१-३५८) । | |
| | नान्दीश्राद्धप्रकरणवर्णनम् | २५६३ |
| | नान्दी श्राद्ध करनेवाले की योग्यता व अधिकार का वर्णन (३५६-३७४) । | |
| | दत्तकपुत्रप्रकरणवर्णनम् | २५६५ |
| | दत्तकपुत्र का वर्णन और उसकी योग्यता (३७५-४२६) । | |
| | दानप्रकरणवर्णनम् | २५६६ |
| | दशविधदानों का निरूपण (४२७-४७६) । दान के अधिकारी जनों का वर्णन (४७७-४८७) । | |
| | दौहित्रप्राधान्यवर्णनम् | २५७५ |
| | दौहित्र की सर्वत्र प्रधानता का निरूपण (४८८-५००) । | |
| | भूमिदानप्रकरणवर्णनम् | २५७७ |
| | भूमिदान प्रकरण (५०१-५१८) । | |

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|---|--|-----------|
| वर्जितस्त्रीणां श्राद्धपाककरणे दोषवर्णनम् | वर्जित स्त्रियों को श्राद्ध का पाक करने में दोष बतलाया है (५१६—५४०) । | २५७६ |
| विधवास्त्रीणां कृत्यवर्णनम् | विधवा स्त्रियों के कार्यों का वर्णन (५४१—५६२) । | २५८१ |
| सधवाविधवास्त्रीणां मीमांसा | सधवा एवं विधवा स्त्रियों का विवेचन (५६३—६३२) । | २५८५ |
| विधवास्त्रीणां प्रकरणम् | अतिरण्डा, महारण्डा और पुत्ररण्डा आदि का वर्णन (६३३—६५६) । | २५८६ |
| पुत्रमहत्त्ववर्णनम् | पुत्र के बिना एक क्षण भी न रहे । पुत्र के महत्त्व का विस्तार से निरूपण (६५६—६७८) । | २५६१ |
| ज्येष्ठपुत्रस्य पैत्र्ये योग्यता | ज्येष्ठ पुत्र की पिता के सभी उत्तराधिकारियों से अधिक योग्यता (६७६—६८८) । | २५६३ |
| औरसपुत्रेषु ज्येष्ठत्वनिर्णयः | औरस पुत्रों में ज्येष्ठ कौन हो इसका निर्णय (६८६—७००) । | २५६५ |

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|---|-------------|-----------|
| पैत्र्ये कर्मणि दौहित्रस्यौरसत्वम् | | २५६७ |
| पैत्र्य कर्म में दौहित्र का पुत्र के अभाव में औरस होना (७०१—७४४) । | | |
| धर्मसेवनलाभः | | २५६६ |
| धर्मसेवन का लाभ (७४५—७६६) । | | |
| सुतस्य कुलतारकत्वम् | | २६०१ |
| पुत्र का कुलतारक होना (७६७—७८६) । | | |
| निर्दुष्टपुत्रयोग्यता | | २६०३ |
| निर्दुष्ट पुत्र की योग्यता (७६०—८०६) । | | |
| दण्ड्यानामदण्ड्यानां यथायथधर्मव्यवहरणम् | | २६०५ |
| दण्डनीय और न दण्ड देने योग्य जनों का धर्म से व्यवहार करना (८१०—८३०) । | | |
| दण्डविधानम् | | २६०७ |
| दण्डविधान वर्णन (८३१—८७१) । | | |
| विप्रमहत्त्ववर्णनम् | | २६११ |
| विप्र का महत्त्व निरूपण (८७२—८६३) । | | |
| नानाविधदानप्रकरणम् | | २६१३ |
| विविध दानों का वर्णन (८६४—६८०) । | | |

दुष्कर्मणां प्रायश्चित्तवर्णनम्

२६२१

दुष्कर्मों का प्रायश्चित्त वर्णन (६८१—६६५) ।

कपिलस्मृति का माहात्म्य वर्णन (६६६) ।

कपिलस्मृति की विषय-सूची समाप्त ।

वाधूलस्मृति के प्रधान विषय

नित्यकर्मविधिवर्णनम्

२६२३

महर्षियों ने वाधूल मुनि से ब्राह्मणादि के आचार पूछे इस पर नित्यकर्म विधि का वर्णन उन्होंने किया (१-३) । ब्राह्ममुहूर्त में शय्या त्याग कर प्रसन्न मन से हाथ-पैर धोकर भगवत्स्मरण करे (४) । ब्राह्ममुहूर्त में सोनेवाला सभी कर्मों में अनाधिकारी रहता है (५) । प्रातः सन्ध्या तारागण के प्रकाश से लेकर सूर्योदय तक है । अतः तारागण के रहते प्रातः सन्ध्या करे (६) । सायंकाल में आधे सूर्य के अस्त होने के समय सन्ध्या करे (७) । कानों पर यज्ञोपवीत रखकर दिन में और सब सन्ध्याओं में उत्तर की तरफ और रात में दक्षिण की ओर मुँह कर टट्टी पेशाब करे (८) । सारे अङ्गों

को सिकोड़ कर नाक और मुँह को वस्त्र से ढक कर मलमूत्र त्याग करे (६)। जो व्यक्ति अपने शिर को बिना ढँके मलमूत्र का त्याग करता है उसके शिर के सौ टुकड़े हों ऐसा वेद शाप देते हैं (१०)। बाद में शोधन कर्म करे। गृहस्थ, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और सन्यासियों का विभिन्न शौच प्रकार (११-१७)। बाह्य और आभ्यन्तर शौच आवश्यक है क्योंकि शौच व आचार से हीन की सब क्रिया निष्फल है (१८-२०)। आचमन प्रकार—ब्राह्मण इतना आचमन ले जितना हृदय तक स्पर्श हो, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और स्त्रियां कण्ठतालु तक स्पर्श करनेवाले जल से आचमन करे। हाथ में कुश लेकर जल पीवे और आचमन करे। (२२-२७)। अपने कटि प्रदेश तक जल में स्नान कर वहीं भीगे कपड़ों से तर्पण, आचमन और जप करे यदि सूखे कपड़े पहनकर करना हो तो स्थल में ये क्रियायें करें (२८-३०) उपवास के दिन दन्तधावनादि न करे। कुला के समय तर्जनी से मुख के शोधन से प्रायश्चित्त लगता है।

स्नानविधिवर्णनम्

२६२७

निषिद्ध तिथियों में दन्तधावन नहीं करना चाहिये।
पतित मनुष्य की छाया पड़ने से स्नान करना चाहिये

अस्पृश्य के छू जाने से १३ बार जल में नहाने से शुद्धि हो। रजस्वला स्त्री को यदि ज्वर चढ़ जावे तो वह कैसे शुद्ध हो इसके उत्तर में वाधूल ने बताया कि चतुर्थ दिन दूसरी स्त्री उसे स्पर्श कर दश या बारह बार आचमन कर अपने पहलेवाले कपड़ों को छोड़कर नये कपड़े पहन ले फिर पुण्याहवाचन के साथ यथाशक्ति दान करे (३१-४८)। भूमि पर गिरा हुआ जल गंगा के समान पवित्र है। चन्द्र और सूर्य ग्रहण के समय कुआ, चापी, तड़ाग के जल शुद्ध हैं। अपनी शौच क्रिया से निर्वृत्त होकर स्नान करे दोनों हाथों को मिला कर जल की अञ्जलि से जल में तर्पण करे जिस तीर्थ से जल लिया जाय उसीसे जलाञ्जलि देवे (४६-५६)। पूर्व की ओर मुख करके देवतागण को, उत्तराभिमुख होकर ऋषियों को और दक्षिण की ओर मुँह करके जल में पितरों को तर्पण करे। स्नान के लिये जाते हुए मनुष्य के पीछे पितरों के साथ देवगण व्यास से व्याकुल जल के लिये लालायित होकर वायुरूप होकर जाते हैं अतः देवर्षिपितृतर्पण किये बिना वस्त्र को न निचोड़े यदि वस्त्र निचोड़ा जाता है तो वे निराश होकर चले जाते हैं। सम्पूर्ण कर्मों की सिद्धि के लिये नदी, तालाब, पहाड़ी झरनों में प्रतिदिन स्नान करे (५७-६३)।

दूसरे के बनाये हुए सरोवर में स्नान करने से उस बनानेवाले के दुष्कृत (पाप) स्नानार्थी को लगते हैं अतः उसमें न नहावे (६४) । सोकर उठने से लार-पसीनों से भरा हुआ मनुष्य अशुद्ध है उसे स्नानादि से शुद्ध होनेपर ही नित्यकर्म सन्ध्योपासन देवर्षि पितृ तर्पण करना चाहिये । सूर्योदय के पूर्व प्रातःकाल का स्नान प्राजापत्य यज्ञ के समान है और आलस्यादि को नष्ट कर मनुष्य को उन्नत विचार और कार्यशील बना देता है । स्नान के समय पहने वस्त्र से शरीर को न मले न पोंछे ही इससे शरीर कुत्ते के द्वारा सूँघा हुआ हो जाता है जो फिर स्नान करने से ही शुद्ध होता है (६५-६८) ।

स्नान मूलाः क्रियाः सर्वाः सन्ध्योपासनमेव च ।

स्नानाचारविहीनस्य सर्वाः स्युः निष्फलाः क्रियाः ॥६७॥

सम्पूर्ण क्रियायें स्नान के अन्तर्गत ही हैं । रविवार को उषा काल में स्नान करने से हजार माघ स्नान का फल और जन्म दिन के नक्षत्र में वैधृत पुण्यकाल, व्यतीपात और संक्रान्ति पर्वों में, अभावस्या को नदी में स्नान कोटि कुलों का उद्धार कर देता है । प्रातः स्नान करनेवाले को नरक के दुःख कभी नहीं देखने

पड़ते । स्नान किये बिना भोजन करनेवाला मल का भोजन करता है (६६-७५) ।

शिव सङ्कल्प सूक्त का पाठ, मार्जन, अघमर्षण, देवर्षि पितृ तर्पण ये स्नान के पाँच अङ्ग हैं (७६-७७) । जल के अवगाहन, जल में अपने शरीर का अभिषेक, जल को प्रणाम और जल में तीर्थों गङ्गादि नदियों का आवाहन फिर मज्जन, अघमर्षण, देवर्षि पितृतर्पण का विधान बतलाया गया है (७८-८६) । प्रातः स्नान का महत्त्व । अपने शरीर को पोंछने पर सूखे कपड़े पहनकर उत्तरीय धारण करे । वन्दन और तर्पण के समय इसे कटि प्रदेश में ही बांधे रखे । फिर तिलक करे । पर्वत की चोटी से, नदी के किनारे से, विशेष रूप से विष्णु क्षेत्र में मिली सिन्धु के तट पर तुलसी के मूल की मिट्टी से तिलक प्रशस्त बताया गया है (९०-१०८) ।

श्यामतिलक शान्तिकर लाल वश में करनेवाला, पीला लक्ष्मी देनेवाला और सफेद मोक्षदाता बतलाया है (१०९-११०) । भगवान् पर चढ़ाये गये हरिद्रा के चूर्ण के तिलक का माहात्म्य (१११) सम्पूर्ण संसार में जो कर्महीन द्विजाति मात्र हैं उनको शुद्ध करने के लिये सन्ध्या स्वयं ब्रह्मा ने बनाई ।

प्रातःकाल गायत्री का ध्यान, मध्याह्न में सावित्री

और सायं काल सरस्वती का ध्यान करना चाहिये ।
प्रतिग्रह, अन्नदोष, पातक और उपपातकों से गायत्री
मन्त्र के जपनेवाले की गायत्री रक्षा करती है इसलिये
इसका नाम गायत्री है ।

प्रतिग्रहादन्नदोषात्पातकादुपपातकात् ।

गायत्री प्रोच्यते यस्माद् गायन्तं त्रायते यतः ॥११५॥

सविता को प्रकाशित करने से इसका नाम सावित्री
और संसार की प्रसवित्री वाणी रूप से होने से इसका
इसका नाम सरस्वती अन्वर्थ है (जैसा नाम वैसा गुण)
(११२-११६) ।

आपोहिष्ठेत्यादि मार्जन मन्त्रों में नौ ओङ्कार के
साथ जो मार्जन किया जाता है उससे वाणी, मन और
शरीर के नवों दोषों का क्षय हो जाता है (११७-१२०) ।
सायंकाल में अर्घ्य जल में न देवे जहाँ सन्ध्या की जाय
वहीं जप भी हो । वेदोदित नित्यकर्मों का किसी कारण
अतिक्रमण हो जाय तो एक दिन बिना अन्न खाये रहना
चाहिये और १०८ गायत्री मन्त्र के जप दोनों सन्ध्या
में विशेष रूप करे (११-१२६) ।

सूतक और मृतक के आशौच में भी सन्ध्या कर्म न
छोड़े प्राणायाम को छोड़ कर सारे मन्त्रों को मन से

उच्चारण करे (१३०-१३२)। देवार्चन, जप, होम, स्वाध्याय, स्नान, दान तथा ध्यान में तीन-तीन प्राणायाम करे (१३३-१३४)। जप का विधान प्रातः काल हाथ ऊंचे रखकर, सायंकाल नीचे हाथ कर एवं मध्याह्न में हाथ और कन्धे के बीच में रखकर जप करे नीचे हाथ कर जप करना पेशाच, हाथ बीच में रखकर करने से राक्षस, हाथ बांधकर करने से गान्धर्व और ऊपर हाथ करने से दैवत जप होता है (१३५-१३६)।

प्रदक्षिणा, प्रणाम, पूजा, हवन, जप और गुरु तथा देवता के दर्शन में गले में वस्त्र न लगावे (१४०)। दर्भा के बिना सन्ध्या, जल के बिना दान और बिना संख्या किया हुआ जप सब निष्फल होता है। जप में तुलसी काष्ठ की माला और पद्माक्ष तथा रुद्राक्ष की माला प्रशस्त है (१४१-१४३)। गृहस्थ एवं ब्रह्मचारी १०८ बार मन्त्र का जाप करे। वानप्रस्थ तथा यति १००८ बार करें। आहुति के लिये सामग्री का विधान (१४४-४५)।

गृहस्थधर्मवर्णनम्

२६३७

गृहस्थ को सम्पूर्ण कार्य पत्नी सहित इष्ट है। जिस मनुष्य की स्त्री दूर हो, पतित हो गई हो, रजस्वला हो, अनिष्ट वा प्रतिकूल हो उसकी अनुपस्थिति में कोई

ऋषि कुशमयी धर्मपत्नी, कोई ऋषि काश की बनी पत्नी को प्रतिनिधि रूप में रखकर नित्यकर्म क्रिया करने की सद्गृहस्थ को आज्ञा देते हैं (१४७-४८)। होम के लिये गो घृत श्रेष्ठ वह न मिले तो माहिष घृत उसके न मिलने पर बकरी का घृत और उन सब के न मिलने पर साक्षात् तैल का व्यवहार करे (१४९)। समय पर आहुति देने का माहात्म्य (१५०-१५२)। वेदाक्षरों को स्वार्थ में लानेवाले मनुष्य की निन्दा। छै प्रकार के वेदों को बेचनेवाले का गणन (१५३-१५८)। रविवार, शुक्रवार, मन्वादि चारों युगों में और मध्याह्न के बाद तुलसी न लावे। संक्रान्ति, दोनों पक्षों के अन्त में द्वादशी में और रात्रितथा दिन की सन्ध्या में तुलसी चयन का निषेध है (१६०)। तीर्थ में मन, वाणी और कर्म से कैसा भी पाप न करे और दान न लेवे क्योंकि वह सब दुर्जर है अतः अक्षम्य है। ऋत (व्यवहार) अमृत सत्य कर्तव्य पालन ऋत या प्रमृत से और सत्य-अनृत से जीविका कमावे (१६१-६३)।

किसी वस्तु को बिना पूछे लेने से पाप (१६४)। मनुजी ने वनस्पति, कन्द, मूल फल, अग्निहोत्र के लिये काठ, तृण और गौओं के लिये घास ये अस्तेय बताये हैं। किन-किन लोगों से किसी भी रूप में कोई वस्तु न लेवें

इसका वर्णन (१६५-१६८)। दूसरे के लिये तिल का हवन करनेवाले दूसरे के लिये मन्त्र जप करनेवाले और अपने माता पिता की सेवा न करनेवाले को देखते ही आँख बन्द कर ले (१६६)। जो लोग निन्द्य कर्म करते हैं उनके सङ्ग से सत्पुरुष भी हीन हो जाते हैं और उनकी शुद्धि आवश्यक है (१७०-१७४)। जो आदेश, तीन या चार वेद के महाविद्वान् दें वही धर्म है और कोई हजारों व्यक्ति चाहे, कहे वह धर्म सम्मत नहीं। वेद पाठी सदा पञ्चमहायज्ञ करनेवाले और अपनी इन्द्रियों को वश में करनेवाले मनुष्य तीन लोकों को तार देते हैं (१७५-१७६)।

पतित लोगों से सम्पर्क करने से मनुष्य एक वर्ष में पतित हो जाता है (१८०)। कलियुग में सभी ब्रह्म का प्रतिपादन करेंगे परन्तु कोई भी वेद विहित कर्मों का अनुष्ठान नहीं करेगा (१८१)। मैथुन में त्याज्य दिनों की गणना—षष्ठी अष्टमी, एकादशी, द्वादशी, चतुर्दशी, दोनों पर्व अमावास्या, पूर्णिमा, संक्रान्ति कोई भी श्राद्ध दिन, जन्म नक्षत्र का दिन, श्रवण व्रत का समय और जो भी विशेष महत्त्वपूर्ण दिन हैं उनमें मैथुन (स्त्री गमन) निषिद्ध है (१८२-१८३)। शुभ समय में अर्थार्थी मनुष्य जिन कामों को अपने स्वार्थ के लिये

करता है उन्हें ही यदि धर्म के लिये करे तो संसार में कोई दुःखी नहीं रह सकता ।

अर्थार्थी यानि कर्माणि करोति कृपणो जनः ।

तान्येव यदि धर्मार्थं कुर्वन् को दुःखभाग्यवेत् ॥१८६॥

भिन्न-भिन्न वस्तुओं एवं पतितों के छू जाने से स्नान का विधान किसी वस्तु को बेचने पर स्नान का विधान आवश्यक है (१८४-१८८) ।

श्रुति स्मृति के आदेश प्रभु की आज्ञा है इनको न माननेवाले को भगवद्भक्त बनने का अधिकार नहीं (१८६) । सच्चे अन्धे का लक्षण—जो श्रुति स्मृति का अध्ययन, मनन और अनुशीलन कर उनके मार्ग का अनुष्ठान नहीं करता वह अन्धा है (१६०-१६१) । पापी को धर्मशास्त्र अच्छे नहीं लगते (१६२) ।

सच्चा ब्राह्मण वही है जो ऋण करने से ऐसे डरता है जैसे सर्प को देखकर । सम्मान से ऐसे दूर रहता है जैसे लोग मरने से और स्त्रियों के सम्पर्क से जैसे मृतक से घृणा होती है वैसे दूर रहता है । ब्राह्मण वह है जो शान्त हो, दान्त हो, क्रोध को जीतनेवाला हो, आत्मा पर पूरा अधिकार करनेवाला हो, इन्द्रियों का निग्रह कर चुका हो । ब्राह्मण का यह शरीर उपभोग के लिये नहीं बल्कि इस शरीर में क्लेश के साथ तपस्या करते हुए

ऊर्ध्व लोक में अनन्त सुख की प्राप्ति के लिये है (१६३-१६४)। दर्श में सूखे कपड़े पहनकर तिलोदक जल के बाहर दे, गीले वस्त्रों से पितर निराश होकर जले जाते हैं। ऊर्ध्व पुण्ड्र का माहात्म्य (१६५-२०१)। श्राद्ध के बाद ब्राह्मण भोजन का विधान (२०२)। विवाह में, श्राद्धादि में नान्दी श्राद्ध करने से, सूतक का दोष नहीं रहता (२०३)।

पितृ श्राद्ध में वर्जित लोगों को देवता कार्य में बुलाने की छूट (२०५-२०६)। पितृ श्राद्ध में वस्त्रों के देने का माहात्म्य (२०७)। अलग-अलग कमानेवाले पुत्रों द्वारा पृथक्-पृथक् पितृ श्राद्ध का विधान (२०८-२१०)। सन्यासी बहुत खानेवाला, वैद्य, नामधारी साधु, गर्भवाला, (जिसकी स्त्री गर्भवती हो) वेदों के आचरण से हीन व्यक्ति को दान और श्राद्ध में न बुलावे (२११)।

गर्भ करनेवाले द्विज के लिये वर्ज्य कर्म (२११-२१७)। स्नान, सन्ध्या, जप, होम, स्वाध्याय, पितृ तर्पण, देव-ताराधन और वैश्वदेव को न करनेवाला पतित होता है अतः इन्हें नियम से करना प्रत्येक द्विजाति का कर्तव्य है (२१८-२२४)।

॥ वाधूलस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

विश्वामित्रस्मृति के प्रधान विषय

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|-------------------------------|-----------|
| १ | नित्यनैमित्तिककर्मणां वर्णनम् | २६४५ |

मङ्गलाचरण (१) ब्राह्ममुहूर्त, उषःकाल, अरुणोदय और प्रातःकाल के मान का वर्णन (३) । नित्य और नैमित्तिक तथा काम्य कर्म समय पर करने से सफल देते हैं (४) ब्राह्ममुहूर्त में शौच से निवृत्त होकर अरुणोदय के पहले आत्मा के लिये स्नान करे प्रातः जप करे और सूर्य को देखकर उपस्थान करे (६) । काल बीतने पर कोई कर्म करने से फल नहीं मिलता यदि किसी कारण से काल का लोप हो गया तो तीन हजार जप करने से उसका प्रायश्चित्त विधान है । दुःसङ्ग या निद्रा अथवा प्रमाद आलस्य से काल का लोप करने से प्रायश्चित्त बतलाया गया है (८-१४) । जो व्यक्ति समय पर नित्यकर्मादि को करता है वह सम्पूर्ण लोगों पर जय पाकर अन्त में विष्णुपुर में जाता है (१६) ।

प्रातः स्नान सन्ध्या और जप अवश्य कर्म है । जैसे समय पर वर्षा होते ही बीज बोने से अच्छी खेती होती है वैसे ही नियुक्त कर्मों को नियुक्त समय पर करने से सद्यः सिद्धि मिलती है (१७-२१) । उत्तम, मध्यम और

अधम सन्ध्या के भेद । शुचि या अशुचि हो, नित्यकर्म को कभी न छोड़े (२२-२५) । तीनों सन्ध्या काल में या तो पूर्व की ओर या उत्तर की ओर मुँह कर नित्यकर्म करे । दक्षिण या पश्चिम की ओर मुँह करके नहीं (२६) । सन्ध्या स्नान किये बिना विद्या पढ़ना हानिकारक है, सन्ध्या काल आने पर उसे छोड़नेवाले को पाप लगता है (३०) । सोपाधि एवं अनुपाधि भेद से आचार के दो भेद—सोपाधि गुणवान् और अनुपाधि मुख्य है (३१-२६) । गायत्री मन्त्र की विशेषता—प्रातः शय्या-त्याग के बाद पृथ्वी का वन्दन भैरव की स्तुति, दक्षिण दिशा में जाकर मल-मूत्र आदि का त्याग करे (३२) । शौच का प्रकार (५३-५६) । दन्तधावन और दंतुवन के लिये वनस्पतियों का परिगणन (६३) । आचमन कर स्नान करने का प्रकार (६८) । सन्ध्यादि, तर्पण का विधान (७३) ।

जलस्नान का विधान मन्त्रोच्चारण पूर्वक विशेष फल-दायक है । तीनों कालों में स्नान का विशेष विधान (७८) । स्नान करनेवाले पुरुष के रूप, तेज, बल, शौच, आयु, आरोग्य, अलोलुपता, एवं तप की वृद्धि व दुःस्वप्न का नाश होता है । तर्पण की विशेषता (८७) । वस्त्र-धारण में वस्त्रों के महत्त्व का वर्णन, प्राणायाम का

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

प्रकार, पूरक, कुम्भक और रेचक से सम्पूर्ण प्रकार के मलदोषों का नाश होकर शरीर की शुद्धि होती है और अध्यात्मबल बढ़ता है। तिलक धारण की विधि, पुण्ड्र धारण इसके बिना सब कर्म निष्फल (१०४)।

२ आचमनविधिवर्णनम्

२६५७

मुख्य तीन प्रकार के आचमनों का वर्णन, पौराण, स्मार्त और आगम, इनके साथ श्रौत एवं मानस आचमनों का वर्णन—मन्त्र जपने एवं नित्यकर्मों के आदि और अन्त में आचमन करे। भगवान् के २१ नामों के साथ न्यास विधान (१-२०)।

२ विधिवदाचमनस्यैवफलवर्णनम्

२६५६

गोर्कण की आकृति बनाकर अंगूठे और सबसे छोटी अङ्गुली को छोड़कर अञ्जलि में जलग्रहण कर आचमन का विधान है इसी का फल है (२१-२३)। थूकने, सोने, ओढ़ने, अश्रुपात आदि से विघ्न होने पर आचमन करे या दक्षिण कान को तीन बार स्पर्श करे। भोजन के आदि में और अन्त में नित्य आचमन करे। मानसिक आचमन में भी केशवाय नमः, माधवाय नमः और गोविन्दाय नमः मन में बोलकर चित्त शुद्धि करे (२४-३२)।

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठांक

२ मार्जनम्

२६६०

“आपोहिष्ठा मयो भुवः” से मार्जन करे फिर न्यास करे, ऐसा करने से द्विजमात्र शुद्ध होकर ध्यान, जप, पूजा में सब सिद्धियां प्राप्त करते हैं (३३-३६) ।

२ पञ्चाचमनविधिवर्णनम्

२६६१

ब्रह्मयज्ञ में तीन बार आचमन का विधान है। श्रौत, स्मार्त, आचमन को किन-किन स्थलों पर करना इसकी विधि (४७-५७) ।

३ प्राणायामविधिवर्णनम्

२६६३

पञ्चपूजाविधिवर्णनम्

२६६५

विलोमगायत्रीमन्त्रवर्णनम्

२६६७

नानामन्त्राणां जपे तत्तन्मन्त्रेण प्राणायामः २६६९

प्राण और अपान का समयुक्त होना ही प्राणायाम कहलाता है, इसे सन्ध्याकाल और प्रत्येक कर्म के आरम्भ में मन को एकाग्र करने के लिये अवश्य करे। नौ बार उत्तम प्राणायाम, छह बार मध्यम और तीन बार अधम कहा गया है (१-३) । गायत्री मन्त्र और व्याहृतियों के साथ प्राणायाम करना चाहिये

(४-५) । पहले कुम्भक फिर पूरक और फिर रेचक, इस क्रम से प्राणायाम करना इष्ट है । सन्ध्या होम काल और ब्रह्मयज्ञ में कुम्भक से आरम्भ कर प्राणायाम करे । प्राणायाम में करने योगाध्यान का वर्णन (६-१०) । दश प्रणव एवं गायत्री मन्त्र के साथ इडा और पिङ्गला को छोड़ सुषुम्ना नाड़ी से कुम्भक करे साथ में मन्त्र का स्मरण बराबर होता रहे (११) । रेचक और पूरक बिना प्रयास के होते हैं । कुम्भक में प्रयास करना होता है यह अभ्यास से शक्य है । अनभ्यास से शास्त्र विष का काम करते हैं, अभ्यास से वही अमृत बन जाते हैं । प्राणायाम के समय सिद्धासन से बैठे । प्राणायाम में चारों अङ्गुली और अंगूठा काम में लेना चाहिये । इस समय मन्त्र के उच्चारण के साथ-साथ उस-उस देवता की मानसा पूजा करनी चाहिये इससे विशेष फल मिलता है ।

लं, हं, यं, रं, वं इन बीजों से पृथिव्यात्मा को गन्ध, आकाशात्मा को पुष्प, वाय्वात्मा को धूप, अग्न्यात्मा को दीप और अमृतात्मा को नैवेद्य प्रदान करे । इरा पञ्च-भूतात्मक मानसी पूजा से ही प्राणायाम की सिद्धि मिलती है (१२-२६) । प्राणायाम का अभ्यास सिद्धासन, कुम्भक के साथ और मन्द दृष्टि के रूप में आँखें बन्द

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

करने से शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है। प्राणायाम में मानसी पूजा का माहात्म्य (३०-३६)। प्राणायाम के बिना सब निष्फल है। विलोम गायत्री मन्त्र का वर्णन (३७-४६)। इससे सम्पूर्ण पाप, रोग, दरिद्रता दूर होते हैं (४७)।

विलोम गायत्री मन्त्र के जाप का फल सम्पूर्ण मन, वाणी और कर्म से किये गये पापों का नाश होना बताया है (४८-४९)। प्राणायाम न करनेवाला अवकीर्णी होता है उसे प्रायश्चित्त लगता है (५०-५२)। विशेष जिन-जिन मन्त्रों का विधान आता है उनके साथ भी पूरक, कुम्भक और रेचक क्रम से प्राणायाम करने का विकल्प है। चार्वाक, शैव, गाणेश, सौर, वैष्णव और शाक्त जो भी मन्त्र हैं उन-उन से प्राणायाम की विधि फल देनेवाली है। भिन्न-भिन्न विधियों में प्राणायाम की १०, १५, २०, २४, ३३, १४ और १६ बार आवृत्ति करने की विधि हैं। वैश्वदेव में १० बार आदि में १० बार अन्त में प्राणायाम करने का विधान है। जहाँ सङ्कल्प है वहाँ २ बार और सभी काम्य आदि कर्मों में १०-१० बार आवृत्ति का विधान है। विलोमाक्षरों से गायत्री का प्राणायाम अनन्त कोटि गुणित फल देता है (५३-७६)।

४

मार्जनम्

२६७१

शिर से पैर तक “आपोहिष्ठादि” मन्त्र से मार्जन का फल । अर्ध मन्त्र और पूर्ण मन्त्र मार्जन दो प्रकार का है (१-५) । ऋग्यजुः साम वेद की शाखावालों का मार्जन क्रम । आपोहिष्ठादि के मन्त्र में प्रणव का उच्चारण करते हुए शिर पर मार्जन करे और “यस्यक्ष-याय जिन्वथ से नीचे की ओर जल प्रक्षेप करे (६-१८) । शिर से भूमि तथा पादान्त मार्जन से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है । मार्जन की फलश्रुति (१६-२७) ।

५ सार्धदानगायत्रीमाहात्म्यवर्णनम्

२६७४

सन्ध्यावन्दन के समय प्रातः और सायं तीन-तीन अर्घ्य सूर्य को दे, मध्याह्न काल की सन्ध्या में केवल एक ही । तीन अर्घ्य में एक दैत्यों के शस्त्रास्त्र नाश के लिये, दूसरा वाहन नाश के लिये और तीसरा असुरों के नाश के लिये और अन्तिम प्रायश्चित्तार्घ्य देकर पृथ्वी की प्रदक्षिणा से सब पापों से छुटकारा हो जाता है । गायत्री के पश्चाद्ग का वर्णन (१-२४) ।

५ प्रायश्चित्तार्घ्यविधिवर्णनम्

२६७७

नानामन्त्रविनियोगध्यानवर्णनम्

२६७६

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

प्रायश्चित्तार्घ्य की विधि का वर्णन—नाना मन्त्रों के विनियोग एवं ध्यान का वर्णन (२५-४४)।

६ द्विविधजपलक्षणम्

२६८१

नैमित्तिक एवं काम्य दो प्रकार के जपों के लक्षण यह सन्ध्याङ्ग के रूप में नदीतीर, सरित्कोष्ठ और पर्वत की चोटी पर एकान्त वास में ही अधिक फल देनेवाला है (१-२)।

मूलमन्त्र से भूशुद्धि, फिर भूतशुद्धि, फिर रक्षाके लिये दिग्बन्धन करना और गायत्री के न्यास का वर्णन (३४-३०)।

६ कराङ्गन्यासवर्णनम्

२६८५

दश बार मन्त्र का जप कर हृदय को हाथ से स्पर्श कर प्राणसूक्त जपे फिर प्राणायाम करे (३१-३२)। अनुलोम एवं विलोम क्रम से करन्यास एवं हृदयादि-न्यास एवं दिशाओं का बन्धन करे।

६ मुद्राविधिवर्णनम्

२६८७

आवाहन आदि के भेद से १० प्रकार की मुद्राओं का वर्णन, गायत्री जप के आरम्भ की २४ मुद्रा (३३-७१)।

७ उपस्थानविधिवर्णनम्

२६९०

सन्ध्याकाल में सूर्योपस्थान का महत्त्व (१-२०)।

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|--------------------------------------|-----------|
| ८ | देवयज्ञादिविधानवर्णनम् | २६६२ |
| | वैश्वदेवकालनिर्णयवर्णनम् | २६६५ |
| | पञ्चशूनापनुत्त्यर्थं वैश्वदेववर्णनम् | २६६७ |
| | वैश्वदेवमाहात्म्यवर्णनम् | २६६६ |

वैश्वदेव में कोद्रव (कोदो), मसूर, उड़द, लवण और कड़वे द्रव्यों को काम में न लेवे (१-२) । नाना प्रकार की बलि करने से नाना प्रकार के काम्य कर्मों की सिद्धियां होती हैं । द्विजों के लिये पाँच ही क्रम से बलि का विधान है । पहले उपवीत, दूसरे निवीत, तीसरे पितृमेध के लिये बलि की जाती है (३-१२) ।

वैश्वदेव में ताजा अन्न ही काम में लिया जाय (१३-१६) । वैश्वदेव मन्त्र के साथ हो या त्रिंता मन्त्र के इसे किसी भी रूप में करना चाहिये ; क्योंकि इसको करनेवाला अन्नदोष से लिपायमान नहीं होता (१७-२४) ।

पञ्चशूनाजनित पापों को जैसे, चूल्हा, चक्की, जल भरने का स्थान, झाड़ू आदि के दोषों को दूर करने के लिये इसकी बड़ी आवश्यकता है (२५-३६) ।

वैश्वदेव को करने से सकल दोषों का निवारण होता है । नित्य होम का वजन सूतक एवं मृतक में बताया

गया है। बन्धदेव के काल का वर्णन। वैश्वदेव माहात्म्य
वर्णन (४०-८३)।

॥ विश्वामित्रस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

लोहितस्मृति के प्रधान विषय

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|------------------------------------|-----------|
| | विवाहाग्नौ स्मार्तकर्मविधानवर्णनम् | २७०१ |

विवाहाग्नि में स्मार्त कर्मों का वर्णन। जिस स्त्री के साथ सर्वप्रथम गार्हस्थ्य सम्बन्ध जुड़ता है वह धर्मपत्नी है। उसके विवाह के समय की अग्नि का ही सभी कार्यों में उपयोग इष्ट है (१-११)। अन्य भार्याओं की अग्नि गौण है उनमें वेदोक्त एवं तन्त्रोक्त प्रयोग नहीं होना चाहिये। यदि उन्हें काम में भी लें तो अमन्त्रक ही प्रयोग होना चाहिये (१२-१६)।

सभी स्मार्त कर्म, स्थालीपाक, श्राद्ध, या जो भी नैमित्तिक हो वह सारा प्रथम धर्मपत्नी की अग्नि में ही हो। (२०-२६)।

अनेकाग्निसंसर्गः २७०४

पूसर्ग अग्नियों का एकत्र संसर्ग का विधिपूर्वक

विधान (३०) । यदि मोह से दूसरी पत्नियों की अग्नि में यागादि का विधान किया जाय तो वह निष्फल होता है (३१-३६) । इसके लिये फिर से मुख्य अग्नि की स्थापना कर फिर विधान करना लिखा है (३७) । यदि धर्मपत्नी कहीं बाहर चली जाय तो वह अग्नि लौकिक हो जाती है । अतः प्रातः सायंकाल के नित्य हवन में धर्मपत्नी का उपस्थित रहना आवश्यक है (३८-४२) । सीमान्तर जाने पर उस अग्नि का फिर सन्धान (स्थापना) करना चाहिये ।

ज्येष्ठादिपत्नीनांतत्सुतानांजैष्ठ्यकानिष्ठयविचारः २७०५

सभी कार्यों में धर्मपत्नी की ज्येष्ठता मानी गई है भले ही दूसरी पत्नियां अवस्था में कितनी ही बड़ी क्यों न हों (४३-४५) । इसी प्रकार धर्मपत्नी से उत्पन्न पुत्र ही कर्मादि करने में ज्येष्ठता प्राप्त करेंगे क्योंकि दूसरी, तीसरी आदि से उत्पन्न पुत्र तो कामज है (४६-५२) ।

अपुत्राया दत्तकविधानवर्णनम्

२७०७

दत्तपुत्र की जातपुत्र के समान स्नेहभाजनता एवं सम्पत्ति का अधिकार (५३-५४) । जिसके पुत्र न हों उन्हें अपने पुत्र के लिये प्रस्ताव करनेवाले की प्रशंसा (५५-५६) । जिसका पुत्र दत्तक लिखा जाय उसे समाज

के प्रमुख व्यक्तियों के सामने इष्ट, भाई-बन्धुओं को बुलाकर बिना पुत्र के माता को विधि-विधान से देना चाहिये। जो पुत्र समाज के गोत्र कुल में से दत्तकरूप में लिया जाय वास्तव में वह अपने पुत्र तुल्य है और अपुत्रक माता-पिता के लिये सर्वथा दैवपैत्र्य कार्य के लिये ग्राह्य है। उस पुत्र का औरस पुत्रों के समान ही सारा अधिकार होता है (६०-७१)।

यदि दत्तक पुत्र लेने के बाद उन माता-पिता के सन्तान हो जाय तो वह चतुर्थ भाग का स्वामी होने का अधिकार रखता है (७२-७४)। जब आदि धर्मपत्नी के न रहने व पुत्र न होने पर दूसरी पत्नी से जो पुत्र होगा वही ज्येष्ठत्व का अधिकारी होगा और अवशिष्ट स्त्रियों की सन्तान कामज रहेगी (७५-८५)।

आत्मज सन्तान की ही औरसता कही गई है (८६-८७)। यदि कोई धर्मपत्नी के सन्तान न हुई उससे पति की इच्छा से दत्तक पुत्र लिया और संयोगवश फिर सन्तान हो गई तो दत्तक पुत्र को ज्येष्ठ पुत्र के रूप में बराबर भाग मिलेगा। यदि दत्तकपुत्र और औरस पुत्र उपस्थित हो तो औरस पुत्र को ही पिता-माता के और्ध्वदेहिक कर्म करने का अधिकार है (८६-९८)।

ज्येष्ठ पत्नी का ही सम्पूर्ण गृह्य अग्नि एवं पाक यज्ञादि में अधिकार एवं नित्य, नैमित्तिक तथा काम्य सभी कर्मों में उसी की प्रधानता है (६६-१०४)। मुख्य गृह्याग्नि के कार्य धर्मपत्नी के अधीन हैं। अतः वह कार्यविशेष उपस्थित हुए बिना कोई भी रूप में सीमोल्लङ्घन न करे अन्यथा गृह्य अग्नि लौकिक अग्नि हो जायगी और अग्नि की स्थापना फिर से करनी होगी (१०५-१०६)। किसी छोटी नदी को भी यदि मोह से पार कर लिया तो फिर नई प्रतिष्ठा अग्नि सन्धान के लिये करनी होगी (११०-११४)।

यदि ज्येष्ठ पत्नी कारण विशेष से उपस्थित न हो सके बाहर गई हुई हो तो द्वितीयादि अग्नि से श्राद्धादि विधि सम्पादित हो सकती है, परन्तु उसमें कोई भी विधि समन्वय नहीं हो सकती सभी अमन्त्रक करनी चाहिये (११५-१२६)। पूर्व पत्नी के न रहने से गृह्याग्नि की स्थापना के लिये जब दूसरा विवाह किया जाय तो पहले के घड़े से नूतन विवाहित स्त्री के घट में अग्नि की स्थापना की जाय (१३०-१३५)। अग्नि उसी समय भ्रष्ट हो जाती है, जब पत्नी चरित्र से दूषित हो (१३६-१४०)।

यदि द्वितीयाम्नि से वेद प्रतिपादित कर्म किये जाय तो ये फलदायक नहीं होते (१४१-१४२) । अतः पूर्व पत्नी की गृह्याग्नि को दूसरे विवाह के वर्तन में स्थापित कर धमपत्नीवत् सारे काम किये जाय (१५३-१५५) । यदि किसी दुश्चरित्र माता के दूषित होने से पूर्व पति से सन्तान हुई हो तो वह सारे वैदिक कार्यों के करने का अधिकार रखती है, परन्तु दुश्चरित्र होने के बादवाली सन्तान किसी भी रूप में ग्राह्य नहीं (१५६-१५७) । कलियुग में पाँच कर्मों का निषेध—

अश्वालम्भ, गवालम्भ, एक के रहते हुए दूसरी भार्या का पाणिग्रहण, देवर से पुत्रोत्पत्ति एवं विधवा का गर्भ धारण (१५८-१६६) ।

द्वादशविधपुत्राः

२७१७

क्षेत्रज, गृहज, व्यभिचारज, बन्धु, अवन्धु और कानीनज आदि १२ प्रकार के पुत्रों के भेद (१७०-१८६) । दत्तक पुत्र लेने और देने में माता-पिता ही एक मात्र अधिकार रखते हैं दूसरे नहीं (१८७-२०८) ।

पुत्रसंग्रहावश्यकता

२७२१

पुत्र संग्रहण की आवश्यकता (२२०) ।

दौहित्रे सति पुत्रप्रतिग्रहाभावः

२७२२

दौहित्र होने पर पुत्रप्रतिग्रह नहीं करना, क्योंकि दौहित्र होने से अजात पुत्र भी पुत्र ही है (२२१-२२४) । किसी के सम्मिलित परिवार में अविभक्त धन के भागीदार की मृत्यु हुई यदि उसके पुत्री हैं और पुत्र नहीं है तो दौहित्र ही पुत्र के समान सभी कार्यों को करने व कराने का अधिकारी है (२२५-२२८) । जो कुछ धन अपुत्रक का है उसका सारा दायित्व उस मृतक की लड़की के पुत्र का है (२२९-२३०) ।

परधनापहारकाणां दण्डविधानवर्णनम्

२७२३

जो व्यक्ति किसी भी प्रकार से दूसरे के द्रव्य को अपहरण करने की अनधिकार चेष्टा करे उसे राजा स्वयं कड़ा दण्ड दे और उसे अपने देश से बाहर निकालने का आदेश दे (२३१-२३५) ।

जो व्यक्ति धर्मसङ्गत राज्य की प्रतिष्ठा में पूर्ण सहयोग दें उन्हें रक्षापूर्वक रखना चाहिये (२३६-२४१)

पुत्रत्वस्याधिकारितावर्णनम्

२७२४

दौहित्र को पुत्रग्रहण की योग्यता (२४२) । अपने इष्ट परिवार माता-पिता, श्रेष्ठ पुरुष आदि की आज्ञा

से अपुत्रा विधवा स्त्री दत्तक ले (२४३-२४४)। जो निकट सम्बन्धी दो या दो से अधिक सन्तानवाला हो उसका कोई-सा भी पुत्र अपने लिये दत्तक लिया जा सकता है (२४६)। यदि कोई-सा भी लूला, लङ्गड़ा, गूंगा, बहरा, अन्धा, काना, नपुंसक या कुष्ठ का दागी हो तो उसे लेना न लेना बराबर है (२४७)। यदि ऐसे विकलाङ्ग दत्तक लिये गये तो मन्त्र क्रिया आदि का लोप हो जाता है (२४८-२५२)। यदि समाज के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति एवं परिवार के भाई-बन्धु जिसके लिये आज्ञा दें तो वह दत्तक सफल होता है (२५३-२५७)॥

अपुत्रक का दत्तक लेना दौहित्र न उत्पन्न हो तब तक प्रामाणिक है बाद में यदि दौहित्र पैदा हो जाय तो वह अप्रामाणिक है ॥

मनु ने दौहित्रों में बड़े छोटे में किसी एक को लेने का विधान बताया है (२५८-२६३)। हां, ३ या ५, ६ पुत्रों में सबसे ज्येष्ठ और सबसे कनिष्ठ को छोड़ किसी एक को लिया जा सकता है (२६४-२६६)। यदि मोह से ज्येष्ठ को दत्तक ले लिया गया तो मौखी विवाह विधि के बाद वह अपने सगे पिता का ही पुत्र होने का अधिकारी है दूसरे का नहीं (२६७)॥ ऐसा दत्तक

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

पुत्र लेनेवाले के किसी काम का नहीं (२७०) । कई स्त्रियों के एक पति से पुत्र हो तो ज्येष्ठ और कनिष्ठ को छोड़ अन्य लिये जा सकते हैं (२७३) ।

एकपुत्रस्य स्वीकरणनिषेधः

२७२७

एक पुत्र यदि बिना स्त्रीवाले के हो और विधवा स्त्री उसे दत्तक ले उसका निषेध (२७४-२८५) ।

विधवास्वीकृतपुत्रदण्डम्

२७२८

जो कोई सुता और दौहित्र को तिरस्कार कर अन्य को दत्तक ले उसपर राजाविशेष विधान से दण्ड लागू करे ((२६०-२६६)) ।

दौहित्रप्रशंसा

२७२९

दौहित्र की प्रशंसा (२६७-३२३) ।

दौहित्रत्रैविध्यम्—

एक तन्मातामह गोत्री, दूसरा दौहित्र और तीसरा निर्दोष

विवाह में कन्याप्रदान के समय मातामह एवं पिता की प्रतिज्ञा के अनुसार होनेवाले सम्बन्ध से उत्पन्न सन्तान क्रमशः तन्मातामह गोत्री और दौहित्र हैं तीसरा निर्दोष तातगोत्री है ।

दौहित्र की श्राद्धादि कर्म में श्रोत्रिय ब्राह्मण से
ज्येष्ठता (३३६-३४८) ।

प्रत्याब्दिकाकरणे प्रत्यवायः

२७३४

प्रतिवर्ष के श्राद्ध को न करने से प्रत्यवाय होता है,
अतः जल, तण्डुल, उड़द, मूंग, दो शाक, पत्र, दक्षिणा,
पात्र और ब्राह्मण ये दश श्राद्ध में उपयोग करने
की वस्तुएं हैं, एक का लोप भी वाञ्छनीय नहीं ।
यदि आपत्काल हो तो उसके लिये अनुकल्प का
विधान है (३४६-३६३) ।

श्राद्धद्रव्याभावेऽनुकल्पः

२७३५

घृत के दुर्लभ होने से तैल उसका प्रतिनिधि आज्य
उसके अभाव में दूध और उसके न मिलने पर दही यदि
ये भी न मिलें तो पिष्ट के जल से मिला कर होमकर्मा-
दिक करे । या फिर प्राप्त मधु से सब काम सिद्ध करे,
किसी भी रूप में फल, पत्र और सुद्रव्य आदि से श्राद्ध
का कार्य किया जाय ।

इनके अभाव में आपोशानादिक क्रियायें जल से
और अन्न से सम्पादन कर पिण्ड प्रदान करे और जल
में विसर्जित करे अविशिष्ट को काम में लें फिर दूसरे
दिन तर्पण करे ।

आपत्कल्प के इस विधान को शान्ति के समय काम में न ले। शुद्ध अन्न का प्रयोग जो अपनी अच्छी कमाई से लाया गया ही विहित है; सद्व्य के द्वारा ही श्राद्ध करने का विधान उसका पाक भी श्राद्धकर्ता की स्त्री द्वारा शुद्धता से किया हुआ होना चाहिये। भाव-शुद्ध, विधिशुद्ध और द्रव्यशुद्ध पाक ही श्राद्ध में ग्राह्य है (३६४-४०६)।

श्राद्धे पाककर्तारः

२७३६

धर्मपत्नी, कुलपत्नी जो वंश में विवाहित हो, पुत्रवती हो, मातायें सम्बन्धियों की स्त्रियां, भूआ, बहिन, भार्या, सासु, मासू, भाई की स्त्रियां, गुरुपत्नियां और इनके न मिलने पर स्वयं श्राद्ध में पाक करनेवाले को प्रशस्त कहा है (४०७-४२०)।

रण्डापाक और बन्ध्यापाक गर्हित बतलाया है (४२१)। हां कुल की कोई ऐसी स्त्रियां करनेवाली न हो तो उपर्युक्त सभी माताओं से पाकक्रिया सम्पन्न हो सकती है (४२२-४२६)।

मृतकार्ये कर्तुरनुकल्पनिषेधः

२७४१

स्वयं के लिये ही मृतकार्य के औद्बर्धदेहिक कार्य का विधान वर्णित है (४२७-४३०)।

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठांक |
|---|-------------|----------|
| कर्त्तावृत्तस्याधिकारः | | २७४२ |
| अतद्वृत्त (अनधिकार) कर्म अकृत कर्म के समान है (४३१-४४४)। | | |
| विधवानां निन्दा | | २७४३ |
| विधवाओं को स्वतन्त्र रहने से निन्दित कहा है अतः पतिगृह या पितृगृह में ही रहना आवश्यक है (४४५-४७२)। | | |
| रण्डाया अस्वातन्त्र्यम् | | २७४६ |
| रण्डा की सम्पत्ति का अधिकार, वह उसके बेचने आदि की अधिकारिणी नहीं (४७३-४८२)। कई रण्डाओं के भेद (४८३-४९३)। | | |
| विवाहात्परतः स्त्रीणामस्वातन्त्र्यवर्णनम् | | २७४९ |
| विवाह के बाद स्त्रियों की अस्वतन्त्रता का वर्णन (४९६-५०५)। शास्त्रदृष्टि से धर्मपालन का महत्त्व (५०६-५२६)। पुत्र के अभाव में दत्तक का विधान वर्णन (५२७-५७६)। समीचीन रण्डा का वर्णन (५७७-६०८)। | | |
| उत्तमदण्डव्यवस्थावर्णनम् | | २७५६ |
| उत्तमदण्डव्यवस्था का वर्णन (६०९-६४०)। | | |

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

सुवासिनीनां शिरःस्नाननिषेधः

२७६१

हरिद्रास्नानविधिः

११

सुवासिनी स्त्रियों को ग्रहण, रजोदर्शन, मङ्गल कार्य, चण्डालस्पर्श एवं यज्ञ के आदि व अन्त इत्यादि कार्यों में शीर्षस्नान कहा है तथा हरिद्रा के चूर्ण को जल में प्रक्षेप कर स्नानविधि कही है (६४१-६४७) ।

पतिव्रताधर्माः

२७६२

पति की सेवा बड़े से बड़ा धर्म (६५३-६७०) ।

दुराचाररतां रण्डां दृष्ट्वा प्रायश्चित्तवर्णनम्

२७६५

दुष्ट चरित्र युक्त रण्डाओं के देखने से प्रायश्चित्त का विधान कहा है (६७१-६८६) ।

नानादण्ड्यकर्मसु दण्डविधानवर्णनम्

२७६७

नानादण्ड्य कर्मों में दण्डविधान का वर्णन (६८७-७०६) ।

नयप्राप्तराज्ये सर्वेषां सुखित्ववर्णनम्

२७६८

नयप्राप्त राज्य में सभी के सुखी रहने का वर्णन (७१०-७२१) ।

॥ लोहितस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

नारायणस्मृति के प्रधान विषय

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|---|-----------|
| १ | नारायणदुर्वाससोः सम्वादः नारायण दुर्वासा का सम्वाद (१—६) । | २७७० |
| | महापातकोपपातकवर्णनम् महापातक और उपपातकों का वर्णन (७—१५) । | २७७१ |
| | प्रतिग्रहपापप्रायश्चित्तवर्णनम् प्रतिग्रहजनित पाप के प्रायश्चित्त का वर्णन (१६—४१) । | २७७३ |
| २ | बुद्धिकृताभ्यासकृतपापानां प्रायश्चित्तवर्णनम् बुद्धिकृत और अभ्यासकृत पापों के प्रायश्चित्त का वर्णन (१-७) । | २७७४ |
| ३ | नानाविधदुष्कृतिनिस्तारोपायवर्णनम् नाना प्रकार के पापों के निस्तार का उपाय (१-१६) । | २७७५ |
| ४ | प्रायश्चित्तवर्णनम् प्रायश्चित्तों का वर्णन (१-११) । | २७७७ |
| ५ | दुष्प्रतिग्रहादिप्रायश्चित्तवर्णनम् पाप समाचार की गति का वर्णन (१-२६) । पापादि को दूर करने के लिये सहस्र कलशस्थापन का विधान (३०-५५) । | २७७६ |

- | अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|---|-----------|
| ६ | सहस्रकलशानिषेकः | २७८४ |
| | सहस्र कलशों से अभिषेक का वर्णन (१-७) । | |
| ७ | कलौ नौयात्राद्यष्टकर्मणां निषेधः | २७८५ |
| | कलियुग में विधवा का पुनः उद्वाह, नाव से यात्रा, मधुपर्क में पशु का वध, शूद्रान्नभोजिता, सब वर्णों में भिक्षा मांगना, ब्राह्मणों के घरों में शूद्र की पाचनक्रिया, भृग्वग्निपतन वर्जित है (१-५) । वेन के पास ऋषियों का अनुरोधपूर्ण आवेदन (६-३३) । | |
| ८ | अष्टनिषिद्धकर्मणां प्रायश्चित्तवर्णनम् | २७८६ |
| | धनाढ्य व्यक्तियों को आठ निषिद्ध कर्मों के करने से सहस्र कलशस्नान, पञ्चवारुण होम, गायत्री पुरश्चरण, महादान और सहस्र ब्राह्मण भोजन इत्यादि प्रायश्चित्त बतलाये हैं (१-१४) । | |
| ९ | धनहीनाय प्रायश्चित्तवर्णनम् | २७९१ |
| | धनहीन के लिये प्रायश्चित्त का विधान—वह शिखा सहित मुण्डित हो पुण्यतीर्थ में, या तालाब में, आकण्ठ जल में मग्न हो अवमर्षण जाप करे (१-१३) । | |
| | ॥ श्री नारायणस्मृति की संक्षिप्त विषय-सूची समाप्त ॥ | |

शाण्डिल्यस्मृति के प्रधान विषय

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

१ आचारवर्णनम्

२७६३

आचार के विषय में मुनियों का शाण्डिल्य से प्रश्नोत्तर (१-१२)।

द्विविधादेहशुद्धिवर्णनम्

२७६५

दो प्रकार की देह शुद्धि का शर्णन। दूसरे की निन्दा पारुष्य, विवाद, झूठ, निजपूजा का वर्णन, अतिबन्ध प्रलय, असह्य एवं मर्म वचन, आक्षेप वचन, असत् शास्त्र एवं दुष्टों के साथ संभाषण इत्यादि दुर्गुणों को त्याग कर स्वाध्याय, जप में रत, मोक्ष एवं धर्म के कार्य में निरन्तर लगना प्रिय बोलना, सत्य एवं परहितकारी वचनों का उच्चारण करना ऐसी बहुत-सी शुद्धियों का वर्णन। शिर, कण्ठ आँख और नासिका के मल को दूर करना यही सर्वाङ्गीणा शुद्धि बतलाई है (१८-३६)।

ज्ञानकर्मभ्यां हरिरेवोपास्य इतिवर्णनम्

२७६७

धर्म की हानि नहीं करनी चाहिये, संग्रह ही करे। धर्म एवं अधर्म सुख व दुःख के कारण हैं। यही सनातन धर्म शास्त्र है अन्य सब भ्रामक हैं तथा तामस व राजस हैं, यही सात्त्विक है। वेद, पुराण एवं उपनिषदों

में “इदं हेयमिदं हेयमुपादेयमिदं परम्” यही बतलाया है। साक्षात्परब्रह्म देवकी पुत्र श्री कृष्ण की आराधना सर्वोत्तम है। देव, मनुष्य और पशु आदि का विस्तार उन्हीं से है।

साक्षाद्ब्रह्म परं धाम सर्वकारणमव्ययम् ।
देवकीपुत्र एवान्ये सर्वे तत्कार्यकारिणः ॥
देवा मनुष्याः पशवो मृगपक्षिसरीसृपाः ।
सर्वमेतज्जगद्भातुर्वासुदेवस्य विस्तृतिः ॥

ज्ञान एवं कर्म से भगवान् की ही आराधना सर्वोत्तम है। वही ज्ञान है, वही सत्कर्म है एवं वही सच्चास्त्र है। जो भगवान् के चरणारविन्दों की सेवा नहीं करते हैं वे शोचनीय हैं (४०-५६)।

सात्त्विकराजसतामसगुणानां वर्णनम्

२७६६

प्रकृति त्रिगुणात्मिका है एवं जगत् की कारणभूता है। सम्पूर्ण संसार देव, असुर और मनुष्य इसी के विकार हैं। इस प्रकार सात्त्विक राजस और तामस गुणों का संक्षेप से वर्णन (६०-७०)।

देश शुद्धि का वर्णन—जहाँ म्लेच्छ पाषण्डी न होधार्मिक तथा भगवद्भक्तिपरायण मनुष्य रहते हों और हिंसक जन्तुओं से शून्य हो वह स्थान शुद्ध है (७१-८२)।

भगवत्पूजनविधिवर्णनम्

२८०१

सात प्रकार की शुद्धि कर भगवत्पूजापरायण होना चाहिये। प्रथम शरीर को तपस्यादि से शुद्ध करे अशक्त हो तो दान करे और दोनों में ही असमर्थ हो तो नामसंकीर्तन करना चाहिये (८३-६५)। उपवास, दान, भगवद्भक्तों के सेवन, संकीर्तन, जप, तप और श्रद्धा द्वारा शुद्धि होती है (६६-१०१)।

पराविद्याप्राप्त्यर्थमधिकारिगुरुशिष्यवर्णनम् २८०३

विद्या की प्राप्ति के लिये आचार्य का वरण और अधिकारी शिष्य का वर्णन (१०२-११२)।

मन, वाणी और कर्म से भी शिष्य अपने गुरु का अहित न विचारे कभी उनके सामने प्रमाद न करे किसी भी प्रकार की उद्विग्नता उत्पन्न करनेवाले भाव, विचार, इच्छा व कर्मों को न करे। शिष्य मूढ़ पाप-रत, क्रूर, वेदशास्त्रों के विरोधी लोगों की सङ्गति न करे इससे भक्ति में विघ्न होता है (११३-१२२)।

२ प्रातःकृत्यवर्णनम्

२८०५

ऋषियों का प्रातः कृत्य के विषय में प्रश्न और महर्षि शाण्डिल्य द्वारा स्नान सन्ध्या आदि को लेकर विस्तार से प्रातः काल के कर्तव्यों का वर्णन। शय्या को छोड़ने

के बाद सर्व प्रथम भगवान् गोविन्द के दिव्य नामों का सङ्कीर्तन करते हुए वस्त्र और दण्डादि कमण्डलु लेकर अपने मस्तक पर कपड़ा बांध कर मल-मूत्र त्याग करने के लिये गांव के बाहर जावे। पेशाब, मैथुन, स्नान, भोजन, दन्तधावन, यज्ञ और सामूहिक हवन में मौन धारण करने की विधि है। यज्ञोपवीत को दाहिने कान पर टांग कर मल-मूत्र का त्याग करना चाहिये (१-६)। मलमूल करने में जो स्थान वर्जित हैं उनका परिगणन (१०-१२)।

मल-मूत्र त्याग के समय, देवता, शत्रु, शिष्य, अग्नि, गुरु, वृद्ध पुरुष और स्त्री को न देखे। अधिक समय तक मल-मूत्र न करे केवल आकाश, दिशा, तारा, गृह और अमेध्य वस्तुओं को देखे (१३-१४)। मिट्टी से गुदा और लिङ्ग को जल से धोवे। फिर हाथ धोकर दन्तधावन करे। स्नान के लिये तीर्थ, समुद्रादि, तालाब, कूप और झरने का जल विशेष प्रयोजनीय है (१५-२०)। जल को अङ्गों से अधिक न पीटे न जल में झुला किया जाय और देह का मल भी जल में न छोड़ा जाय फिर बाहर आकर सन्ध्या कर्म के लिये स्थान को धोवे और कपड़े बदले (२१-२८)। स्नान प्रकरण के साथ नित्य कृत्यों का वर्णन (२८-६१)।

३ उपादानविधिवर्णनम्

२८१३

द्वितीयकाल में करने योग्य भगवत्पूजन आदि का वर्णन । भक्ति का लाभ जो श्रद्धालु एवं अपवर्ग के सुख को जाननेवाले हैं उन्हें ही मिलता है (१-४६) ।

बाह्य और आभ्यन्तर शुद्धियों का वर्णन । भोजन को अग्निदेव के समर्पण करने का वर्णन (५०-६०) । पाक में निषिद्ध वृक्षों का इन्धन जलाने के लिये परिगणन (६१-१०८) । निषिद्ध और ग्रहण योग्य वस्तुओं का वर्णन (१०९-१२०) ।

ग्राह्य और निषिद्ध पय का वर्णन (१२१-१३५) । भोजन बनाने में कुशल सती स्त्री एवं निषिद्ध स्त्रियों के लक्षण (१३६-१५०) ।

स्त्री के साथ सद्व्यवहार का वर्णन (१५१-१५८) । इस प्रकार भगवत्प्रीत्यर्थ उपादानों का उपयोग कर गृहस्थ सुखी होता है (१५८-१६३) ।

४ इज्याचारवर्णनम्

२८२६

एक देव की पूजा ही इष्ट है, भगवद्भक्ति विषयक नियमों का विस्तार से वर्णन । भागवतों की सदा पूजा करनी चाहिये । विष्णुभक्त गृहस्थों के कर्मों का वर्णन भगवत्पूजा प्रकार, सच्छास्त्रों के श्रवण पठन का महत्त्व

अध्याय प्रधान विषय पृष्ठाङ्क
वर्णन, योगविधि का वर्णन, उपवास की प्रशंसा
(१-२४२) ।

५ रात्रावन्त्ययामे योगकृत्यवर्णनम् २८५१

भगवत्पूजा करने का विधान । योगधर्म का वर्णन ।
भगवद्भक्त के शीलाचार का निरूपण सभी कर्मों को
भगवदर्पण बुद्धि से करनेवाले मनुष्य का जन्म सफल
होता है । शास्त्र की प्रशंसा (१-८१) ।

॥ शाण्डिल्यस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

कण्वस्मृति के प्रधान विषय

| | |
|--|------|
| धर्मसारवर्णनम् | २८६० |
| धर्मकर्त्तव्यवर्णनम् | २८६१ |
| नित्यनैमित्तिककर्मणां फलनिर्णयः | २८६३ |
| नित्यकृत्यवर्णनम् | २८६५ |
| प्रातःस्मरणे कीर्त्यानां वर्णनम् | २८६७ |
| पाने भक्षणेच शब्देकृते प्रायश्चित्तवर्णनम् | २८६८ |

युगभेद से ब्रह्मवेत्ता आदि ऋषियों ने कण्व ऋषि से
सनातन धर्मों के विषय में पूछा (१-५) ।

कण्व द्वारा धर्मसार का निरूपण

धर्मकर्तव्यवर्णन—जिस व्यक्ति की बुद्धि ऐसी है कि क्रिया, कर्त्ता, कारयिता, कारण और उसका फल सब कुछ हरि है वही स्थिर बुद्धि का है, उसका जीवन सफल है (६-१०)। परमेश्वरप्रीत्यर्थ किया हुआ कर्म ही सफल है। सत्सङ्कल्प एवं उसका फल (११-६१)। नित्य-नैमित्तिक कर्मों का फल निर्णय (४-५०)। नित्यकृत्य का वर्णन (५१-७४)। प्रातःकाल में स्मरण करने योग्य कीर्त्य महानुभावों का वर्णन (७५-८०)।

प्रातः शौचस्नानादि क्रियाओं का वर्णन (८१-६४)। गण्डूष के समय शब्द का निषेध और उसका प्रायश्चित्त का वर्णन (६५-६७)। भक्षण एवं खाने के समय भी शब्द करने का निषेध (६८-१०४)। मूत्र पुरीषोत्सर्ग में गण्डूष के बाद आचमन का विधान (१०५-११६)। गृहस्थों का मृत्तिका शौच का विधान (११७-१२६)। शुभकर्मों में सर्वत्र आचमन का विधान (१२७-१४०)। नित्यकर्मों में उलट-फेर करने से फल नहीं होता है (१४१-१५०)।

ज्ञान के समय आवश्यक कृत्य जैसे सन्ध्या, अर्घ्य, गायत्री मन्त्र का जप देवर्षिपितृतर्पण, स्नानाङ्गतर्पण अवश्य करने चाहिये (१५१-१५८)। कण्ठज्ञान,

कटिल्लान, पादस्नान, कापिल स्नान, प्रोक्षणस्नान स्नात-
स्नान एवं शुद्ध वस्त्र धारण करने का विधान, जैसा
शरीर माने वैसा करे (१५६-१६०) ।

वायव्य स्नान का अन्य स्नानों से श्रेष्ठत्व वर्णन
(१६१-१६७) । सन्ध्याओं का विधान (१६८-१७०) ।
साथ ही गायत्री जप का साहाय्य (१७१-१६८) ।
सन्ध्या ही सब का मूल है (१६६-२०६) । गायत्री
मन्त्र का वैशिष्ट्य वर्णन (२०७-२२३) । वेद पठन
का अधिकार गायत्री से ही शक्य है (२२३-२२८) ।

सम्यक्प्रकार गायत्री जप का फल वर्णन (२२६-
२४१) । सन्ध्या, गायत्री और वेदाध्ययन का फल
कब नहीं मिलता (२४२-२५६) । कलि में गायत्री मन्त्र
का प्राधान्य (२६०-२६६) । मूक ब्राह्मण का वेदादि
व वैदिक कर्मों के करने में योग्यता का वर्णन (२७०-
२८०) । वैदिक कृत्य की सब में प्रधानता (२८१-३००) ।
ब्रह्मार्पण बुद्धि से ही सब कर्मों का अनुष्ठान इष्ट है
(३०१-३२५) ।

एक कार्य के अनुष्ठान में कार्यान्तर (दूसरा काम) वर्जित
है (३२६-३२७) । उपासना का महत्त्व (३२८-३३४) ।
गार्हपत्य अग्नि की स्थापना और उसके उपयोग का

वर्णन (३४०-३४६) । नित्य होम एवं अग्नि के उप-
स्थान का विधान (३५०-३५०) ।

पञ्चपाक न करने की अवस्था में विकल्प का विधान
(३६१-३७१) । पञ्चमहायज्ञों का निरूपण (३७२-
३८३) । ब्रह्मवेदाध्ययन में अधिकारी होने का वर्णन
(३८४-३९४) । ब्रह्मज्ञान की एक साधना का उपा-
सनाक्रम प्रयोग (३९५-४१४) । अग्निहोत्र, दर्शादि
एवं आग्रयण, सौत्रामणि और पितृयज्ञों का निरूपण
(४१५-४२६) ।

वेदों के अनभ्यास से मानव-चरित्र का सांस्कृतिक
विकास सदा के लिये रुक जाने से राष्ट्र की अवनति
होती है (४२७-४३३) । चित्तशुद्धि के लिये वेदोक्त
मार्ग ही श्रेयस्कर है (४३४-४३७) । चार पितृ कर्मों
का वर्णन, उन्हें यथाशक्ति करने का आदेश (४३८-
४४३) । विविध ऋणों से छुटकारा पाने का प्रकार
(४४४-४६८) ।

वैदिक कर्मों की तुलना में अन्य कार्यों का गौणत्व
वर्णन एवं दिव्य भाषा की योग्यता (४६९-४७७) ।
नित्यनैमित्तिक कर्मों में विष्णु का आराधन वर्णन
(४७८-४८१) । दौर्ब्रह्मण्य से मनुष्य सदा दूर रहे
(४८३-४८८) । अग्निष्टोम और अतिरात्रों का अनुष्ठान

श्रेयस्कर है, सप्तसोम संस्था के पाकयज्ञों का विधान (४८६-४९४)। इन अनुष्ठानों को न करने से प्रत्य-वायिक दोषों का निरूपण (४९५-४९७)।

ब्रह्मचारी के नित्यकृत्यों का वर्णन (४९८-५०२)। जातकर्म, चौल, प्राजापत्य, उपाकर्म आदि का विधान (५०३-५१३)। भिन्न-भिन्न अनुवाकों का वर्णन (५१४-५२६)। नाना काण्डों का वर्णन (५२६-५३७)। ब्रह्मचारी वेदव्रतों का सम्पादन कर विधिपूर्वक स्नातक-धर्म में दीक्षित हो (५३८-५४६)। गृहस्थ में प्रवेश के लिये लक्षणवती स्त्री से विवाह और उसके साथ वैदिक विधि से गृहप्रवेश व अग्निहोत्र का विधान (५४०-५४५)। गुप्ति होम का विधान (५४६-५४८)। औपासन कृत्यों का वर्णन (५४९-५४९)। गृहस्थ के लिये नित्य कर्तव्य विधि का वर्णन (५४५-५५३)। फिर इष्ट कर्तव्य एवं अनिष्ट कर्तव्यों का परिगणन (५५४-५६२)।

प्रातःकाल से सायंकाल तक के कर्तव्यों का निर्देश (५६३-५७३)। गृहस्थ भगवान् लक्ष्मीनारायण का ध्यान सदैव करे। गृहस्थ को आनेवाले सभी सम्मान्य गुरुजन अतिथि एवं विशिष्ट जनों की पूजा का विधान (५७४-५८०)। उपयुक्त पाकों का विधान और उनके करनेवाले स्त्री पुरुषों का वर्णन (५८१-६०१)। पंक्ति-

वर्ज्य भोजन में दोष वर्णन (६०२-६०५) । गृहस्थ के लिये पठनीय एवं करणीय विधान (६०६-६१३) । कन्दमूल फल जो भक्ष्य हैं उनका विधान (६१४-६१६) ।

यज्ञों का ब्रह्मज्ञान के समान फल वर्णन (६२०-६३६) । शेषहोम के विधान का वर्णन (६३७-६५६) । ब्राह्मणादि का पूजन (६५७-६७७) । पुत्रविवाह से पुत्री विवाह की विशेषता । सुपात्र में कन्यादान पुत्र से सौ गुणा अधिक बताया है (६७८-७००) । गोत्रपरिवर्तन के सम्बन्ध में नाना मत (७०१-७२२) । वंश के उद्धार के लिये दत्तक पुत्र का विधान (७२३-७४३) । दत्तक में दौहित्र की योग्यता (७४४-७५५) । श्राद्धकृत्य में निर्दिष्ट का अन्य कृत्य नियोजन में निषेध (७५६-७८६) । एक काल में बहुत से श्राद्ध आने पर कृत्यों का सम्पादन प्रकार (७८६-७८८) । ब्रह्मवेदी ब्राह्मण का माहात्म्य (७८९-७९२) । कण्वस्मृति का फल वर्णन ।

॥ कण्वस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

दाल्भ्यस्मृति के प्रधान विषय

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|---|-----------|
| | दाल्भ्यस्मृति ऋषीणां धर्मविषयकः ग्रन्थः | २६३३ |
| | षोडशश्राद्धवर्णनम् | २६३५ |

दाल्भ्य से ऋषियों का धर्माधर्म विवेक, स्मृतशुद्धि, मासशुद्धि, श्राद्धकालादि के सम्बन्ध में ग्रन्थ, इष्टापूर्त को लेकर दाल्भ्य द्वारा विशेष प्रशंसा, पितरों के तर्पण का विधान (१-१६ । १६ श्राद्धों का वर्णन (२०-४१)। श्राद्ध में निषिद्ध कर्मों का परिगणन (४२-५४)। श्राद्ध में भोजन करनेवाले के लिये आठ वस्तुओं का त्याग (५५-५६)। श्राद्धकरण में पुत्र का अधिकार (६०-६७)।

शस्त्रहतकानां श्राद्धदिनवर्णनम् २६४१

नाना सम्बन्धियों के भिन्न-भिन्न दिनों में श्राद्ध का विधान। शस्त्र हतक के श्राद्ध दिन का वर्णन (६८-७०)। स्मृतक का श्राद्ध दिन अविदित हो तो एकादशी को श्राद्ध किया जाय (७१-८०)।

आम श्राद्ध के करने का विधान (८१)। पहले माता का श्राद्ध फिर पितरों का फिर मातामहों का (८२-८५)। ब्रह्मघातक का लक्षण, इनके स्पर्श करने

से स्नान और भोजन करने से कुच्छसान्तपन का विधान । जो चाण्डाली में अकाम से गमन करे उसके लिये सान्तपन एवं दो प्राजापत्य का विधान । सकाम चाण्डाली गमन करनेवाले को चान्द्रायण और दो तप्तकुच्छ का प्रायश्चित्त करने का विधान (८६-६६) । गोहत्यावाले के लिये प्रायश्चित्त का विधान (६७-१०२) । रोध, बन्धन, अतिवाह और अतिदोह का प्रायश्चित्त विधान (१०३-१०८) । वृषभ की हत्या का प्रायश्चित्त (१०९-११०) ।

गोदोहन का नियम—दो महिने बछड़े को पिलावे व दो मास दो स्तनों का दोहन करे तथा दो मास एक वक्त शेष सराय में अपनी इच्छा हो वैसे करे ।

द्वौमासौ पाययेद्वत्सं द्वौ मासौ द्वौस्तनौ दुहेत् ।

द्वौमासौ चैकवेलायां शेषं कालं यथेच्छया ॥१११॥

किन-किन स्थानों में प्रायश्चित्त नहीं लगता इसका वर्णन (११२-११३) । किन-किन को प्रायश्चित्त न करने का पाप लगता है (११४) । आशौच का निर्णय वर्णन (११५-१२१) । किसी हीन से सम्पर्क करने में दोष कहा है (१२२-१२३) । सूतक और मृतक के आशौच का विधान (१२४-१२६) ।

आशौचनिर्णयवर्णनम्

२६४३

बाल, शिशु एवं कुमार की परिभाषा (१३०) ।
 विवाह, चौल और उपनयन में यदि माता रजस्वला
 हो जाय तो शुद्धि के बाद मङ्गल कार्य करे (१३१-१३२) ।
 कोई कार्य प्रारम्भ हो और सूतक का आशौच हो जावे तो
 उस कार्य के सम्पादन का विधान (१३४) । श्राद्धकर्म
 उपस्थित होने पर निमन्त्रित ब्राह्मण आवें तो सूतक का
 आशौच नहीं लगता व उस कार्य के सम्पादन का विधान
 (१३५) ।

देशान्तरपरिभाषावर्णनम्

२६४५

ब्राह्मणों के भोजन करते हुए यदि सूतक हो जाय तो
 दूसरे के घर से जल लाकर आचमन करा देने से शुद्धि
 हो जाती है (१३७) । देशान्तर में यदि कोई सपिण्ड
 मर जाय तो सद्यः स्नान से शुद्धि कही गई है (१३८) ।
 देशान्तर की परिभाषा ६० योजन दूर या २४ योजन
 अथवा ३० योजन दूर को देशान्तर बताया है या
 बोली का अन्तर या पर्वत का व्यवधान तथा महानदी
 बीच में पड़ जाती हो तो देशान्तर कहा जाता है
 (१३९-१४०) ।

॥ २६४८

शुद्धाशुद्धिवर्णनम्

२६४७

आशौच का विशेष रूप से. वर्णन—सूतक एवं मृतक आशौच का प्रारम्भ कब से माना जाय इसका निर्णय। रजस्वला के मरने पर तीन रात के बाद शवधर्म का कार्य सम्पादन किया जाय। शुद्धाशुद्धि का वर्णन (१४१-१६३)। स्पृष्टास्पृष्टि कहाँ नहीं होती इसका वर्णन (१६३)। दिन में कैथ की छाया में, रात्रि में दही एवं शमी के वृक्षों में सप्तमी में आंवले के पेड़ में अलक्ष्मी सदा रहती है अतः उनका सेवन न करे (१६४)। शूर्प (सूप) की हवा, नख से जलबिन्दु का ग्रहण केश एवं वस्त्र गिरे हुए घड़ेका जल और कूड़े के साथ बुरहारी इनसे पूर्वकृत पुण्य का नाश होता है (१६५)। जहाँ कहीं भी शुद्धि की आवश्यकता हो वहाँ-वहाँ तिलों से होम एवं गायत्री मन्त्र के जप से शुद्धि कही गई है (१६६)। दालभ्यस्मृति के सुनाने का फल (१६७)।

॥ दालभ्यस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥

आङ्गिरसस्मृति के प्रधान विषय

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

पूर्वाङ्गिरसम्

आङ्गिरसस्मृति ऋषीणाम्प्रश्नः—

२६४६

आङ्गिरस से ऋषियों का प्रश्न (१) । धर्म का स्वरूप वर्णन (२-४) । वैदिक कर्मों को पुराणोक्त मन्त्रों से न करे (५-६) । मन्त्र के अभाव में व्याहृतियों को काम में लिया जाय । व्याहृतियों का महत्व वर्णन (७-१४) । जात कर्मादि संस्कारों का अतिक्रम होने पर प्रायश्चित्त (१५-२१) ।

श्राद्धापाकानन्तरमाशौचे निर्णयः

२६५१

श्राद्धपाक के बाद यदि आशौच हो जाय तो विधान । उस क्रिया के करने में ऋत्विक्गण को वह बाधक नहीं हो सकता (२२-२४) । पाकारम्भ के बाद यदि आस-पास में कोई मृत्यु हो तो श्राद्ध दूषित नहीं होता (२५) । पाकारम्भ से पूर्व भी यदि कोई मृत्यु हो तो वह न करे (२६-२८) । दर्श पूर्णमास इष्टि पशुबन्ध के अनन्तर श्राद्ध (२९-३३) । महादीक्षा में श्राद्ध (३४-३६) । खर्वदीक्षा में श्राद्ध (३६-३७) । दीक्षा-वृद्धि में श्राद्ध (३७-४०) । दीक्षा के बीच में मृत्यु

होने से नहीं होता (४१-४३)। वैदिक कर्म का प्राबल्य (४४)। सूतिकाशौच एवं मृतकाशौच में वैदिक कर्म न करे, अस्पृश्यता आवश्यक है (४५-४८)। सतत आशौच होने पर श्राद्ध करने के लिये उस ग्राम को छोड़ दूसरे ग्राम में जाकर श्राद्ध करे (४९-५५)।

शिखानिर्णयवर्णनम्

२६५५

शत्रु के द्वारा छिन्न शिखा हो जाने पर गौ के पुच्छ के समान बाल रखकर प्राजापत्य व्रत कर संस्कार से शुद्धि कही गई है (५६-५७)। मध्यच्छेद में भी वही बात है (५८)। रोगादिसे नष्ट होने पर भी पूर्ववत् विधान है (५८-६०)। ५० वर्ष की अवस्था में शिखा न रहने पर आस-पास के बालों को शिखा के समान मान ले (६१-६३)। पांच बार शत्रु से शिखा छेद होने पर ब्राह्मण्य नष्ट हो जाता है (६४-६६)। सूतकादि से श्राद्ध में विघ्न होने से स्त्री संभोग होने पर गर्भ रहे तो ब्रह्महत्या व्रत का विधान (६६-६६)। त्रिप्रायक श्राद्ध का वर्णन (७१-७६)। लाजहोम से पूर्व यदि वधूरजस्वला हो तो “हविष्मती” इस मन्त्र से सौ कुम्भों के विधान से स्नान कर वस्त्र बदलने से शुद्धि (७७-८१)। लाजहोम के बाद होने पर स्नान करा-

कर अवशिष्ट निर्मन्त्रक विधि करे और शुद्ध होने पर समन्त्रक विधि यथावत् करे (८२-८४) ।

औपासन अभी आरम्भ न हो और दूसरे दिन रजस्त्रला हो तो उसी प्रकार अमन्त्रक विधि एवं शुद्ध होने पर मन्त्रोच्चारण के साथ क्रिया करे (८५-९३) । आशौच में नित्यनैमित्तिक कर्मों का वर्जन (९४-९५) । इनसे प्रेतकृत्य का नाश होता है अतः वर्जित हैं (९५-९७) । अत्यन्याय, अतिद्रोह और अतिक्रूरता कलि में भी वर्जित है । अति अक्रम और अतिशास्त्र भी वर्जित है (९८-१०३) ।

जीवत्पितृक पिण्ड पितृ यज्ञ श्राद्ध का वर्णन (१०४-१०७) । पिता यदि सन्यास ले ले तो पातित्यादि दूषित होने पर उनके पितादि के श्राद्ध का विधान (१०८-११७) । इसी प्रकार चाचा आदि की स्त्रियों का (११८-१२०) । गौणमाता के श्राद्ध का विधान (१२१-१२५) । श्राद्धाधिकार और श्राद्धकर्ता गौणपिता के लिये भाई का पुत्र सपत्नीक कृतक्रिय भी पुत्र सञ्ज्ञा पाता है (१२६-१२८) । गोत्र नाम का अनुबन्ध व्यत्यास होने पर फिर कर्म करें (१३०-१३२) ।

अनाथप्रेतसंस्कारेऽश्वमेधफलवर्णनम्

२६६३

कर्ता के दूर होने पर प्रेष्यत्व करे (१३३-१३४) ।

अन्य से करने पर, वाङ्मात्रदान करने पर श्राद्धमात्र होता है (१३५-१३८)। भ्रष्ट एवं पतितों का घट स्फोटन का अधिकार (१३९-१४०)। अनाथप्रेत के संस्कार करने से अश्वमेध यज्ञ के समान फल प्राप्त होता है व प्रेत के संस्कार न करने में दोष (१४२-१४३)। विप्र की आज्ञा से यतिकृत्य (१४४-१४७)। कर्ता के निकट होने पर अकर्तृकृत को फिर करे (१४८)। असगोत्रों के संस्कार में आशौच (१४९)। माता-पिता के मृताह का परित्याग होने पर प्रायश्चित्त (१५०-१५१)। नदी स्नान से निष्कृति या संहिता पाठ से (१५२-१५६)। वेदमहिमा (१५७-१५९)। ब्राह्मण का वेदाधिकार (१६०-१६३)।

स्नान का सब विधियों में प्राधान्य (१६४)। सम्पूर्ण कार्यों में स्नान ही मूल कारण बताया है (१६५-१६७)। अस्पृश्य स्पर्शनादि कर्माङ्गस्नान (१६८-१७१)। वमन में स्नान (१७२)। वमन में स्नान न कर सके तो वस्त्र बदल ले (१७३-१७४)। शाकमूलादि के वमन में स्नान (१७५-१७६)। रात्रि में वमन में स्नान (१७७)। अपने गोत्र के छोड़ने पर अन्य गोत्र के स्वीकार करने का दोष (१७८-१७९)। अर्धोदय, महोदय एवं योग का विधान (१८०-१८३)। स्त्री के पत्यन्य के साथ चितारोहण होनेपर पुत्र का कृत्य (१८५-१८९)।

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

स्त्रीणां पुनर्विवाहे प्रायश्चित्तवर्णनम्

२६६६

जातिभेद से निष्कृति (१६२) । स्त्री के पुनर्विवाह में दोष जैसे—

पुनर्विवाहिता मूढैः पितृभ्रातृमुखैः खलैः ।

यदि सा तेऽखिलाः सर्वे स्युर्वै निरयगामिनः ॥१६३॥

पुनर्विवाहिता सा तु महारौरवभागिनी ।

तत्पतिः पितृभिः सार्धं कालसूत्रगगो भवेत् ।

दाता चाङ्गारशयननामकं प्रतिपद्यते ॥१६४॥

यदि मूर्ख एवं दुष्ट पिता व भाई आदि के द्वारा फिर स्त्री विवाहित की जाय तो वे सब नरकगामी होते हैं और वह स्त्री महारौरव नरक में जाती है, व उसका विवाहित पति अपने पितरों के साथ कालसूत्र नामक नरक में गिरता है एवं देनेवाला अङ्गारशयन नामवाले नरक में जाता है । पुनर्विवाह के दोष निवारणार्थ प्रायश्चित्त का कथन (१६३-२०४) ।

भ्रान्ति से पुत्रिकादि विवाह होने पर चन्द्रायणादि करने से स्वमात्र की शुद्धि (२०५-२०७) । पुत्र होनेपर व्रत का विधान (२०८-२११) । एक, दो, तीन और चार-पाँच बार विवाहिता होनेपर प्रायश्चित्त (२१२-२१७) । उससे तो वेश्या की विशेषता (२१८-२२४) । प्रविष्ट परपति के काय द्वारा संयोग होनेपर प्रायश्चित्त

(२२५-२२७) । अग्राह्य और ग्राह्यमूर्ति का वर्णन
 (२२८-२२९) । अग्राह्यमूर्ति का निवेद्य (२३०-२३८) ।
 भगवत्प्रसाद ग्रहण में भक्षणविधि (२३९) । निवेदन-
 विधि (२४०) । अत्युष्ण निवेदन करने पर नरकगामी
 होता है (२४१-२४२) । निवेदन प्रकार (२४२-२४५) ।

गृहस्थस्य रात्रावुष्णोदकस्नानवर्णनम्

२६७५

निवेदित का स्वीकार प्रकार (२४६-२४७) । निवेदित
 वस्तु बच्चों को दे (२४८) । गृहस्थ द्वारा रात्रि में गर्म
 जल से स्नान (४४९-२५०) । अभ्यङ्ग का विधान
 (२५१-२५३) । माध्याह्निक एवं क्षुर स्नान का वर्णन
 (२५४-२५७) । प्रातः सायं पर्वादि में अभ्यञ्जन स्नान
 (२५८-२६२) । सोदकुम्भ नान्दी श्राद्ध में अभ्यञ्जन
 स्नान (२६३-२६६) । क्रोशस्थित नदी स्नान से श्राद्ध
 विधान (२६७) । सङ्कल्प (२६८-२७१) । पितृ श्राद्ध
 के व्यत्यास में फिर करने का विधान (२७२) ।
 शून्यतिथि में करने से फिर करे (२७३-२७४) । पितृ
 श्राद्ध के बाद कारुण्य श्राद्ध (२७५-२७६) । माता-
 पिता का श्राद्ध एक दिन हो तो अन्न से करे (२७७-
 २७९) । चाक्रिक श्राद्ध (२८०-२८१) । ग्रहण में भोजन
 निषेध वृद्ध बाल और आतुरों को छोड़कर (२८२-२८३) ।

अत्यन्त आतुरों को भी छूट (२६२-२६७)। प्रस्तास्त शुद्ध होने पर सकामी व निष्कामीजन के लिये भोजन का विधान (२६८-३००)।

मातापितृभ्यां पितुःदानं ग्रहणञ्च

२६८१

अग्निहोत्र वर्णन (३०१)। दत्तपुत्र वर्णन (३०२)। माता-पिता द्वारा देने और लेने का विधान (३०३-३१३)। पुत्र संग्रह अवश्य करना चाहिये (३१४-३१५)। अपुत्र की कहीं गति नहीं (३१६)। पुत्रवान् की महत्ता का वर्णन (३१७-३२३)। पुत्र उत्पन्न होनेपर उसका मुख देखना धर्म है (३२४-३२६)। वृत्तिदत्तादि पुत्रों का वर्णन (३२७-३३५)। सगोत्रों में न मिले तो अन्य सजातियों में से पुत्र को ले अथवा सवर्ण में ले (३३६-३३७)। असगोत्र स्वीकृति में निषेध (३३८-३४२)। विवाह में दो गोत्रों को छोड़ने का विधान (३४३-३४४)। अभिवन्दनादि में दो गोत्र का वर्णन (३४५-३४६)। गोत्र और श्रुषियों का विचार (३४७-३५१)। दत्तजादि का पूर्व गोत्र (३५२-३५८)।

भ्रातृपुत्रादिपरिग्रहवर्णनम्

२६८७

भ्राता के पुत्र को लेने में विवाह और होमादि की क्रिया नहीं केवल वाणीमात्र से ही पुत्र संज्ञा कही है

(३५६) । भ्राता के पुत्र का परिग्रह (३६०-३६३) । किसी पुत्र को लेने के लिये स्वीकृति होनेपर यदि औरस पुत्र हो तो दोनों को रखे नहीं पाप लगता है (३६४-३६७) । पुत्रदान के समय में जो कहा गया उसे पूरा करना चाहिये (३६८-३७५) । भाई के पुत्र को लेने पर दिये हुए का समांश औरस गोत्र का चौथा हिस्सा (३७६-३८०) ।

दत्तक से औरस उपनीत न होनेपर प्रायश्चित्त (३८१-३८२) । भार्या पुरुष का पुत्र ग्रहण (३८३-३८८) । उस समय की प्रतिज्ञा पूरी न करने से दोष (३८९-३९६) । सपत्नियों में पुत्र के ग्रहण के समय जो रहे तो वह माता दूसरी सपत्नी माता (३९८-३९९) । अन्य मातामहादि का स्थान (३९९-४०५) । सपत्नी का पिता मातामह नहीं (४०६) । सपत्नी माता का तर्पण (४०६-४०८) ।

औपासनाग्नौ श्राद्धेऽग्रमादवर्णनम्

२६६१

सपत्नी माता का औपासन अग्नि में श्राद्ध (३९६) । पत्नी की अग्नि (४००-४०१) । भाई के पुत्र के ग्रहण की विधि (४०२-४११) । विभाग में भाई बराबर है (४१२-४१३) । कामज पुत्रों का वर्णन (४१४-४३३) । दत्तादि

में विशेष (४३४-४४५)। पत्नी की वैशिष्ट्यता (४४६-४४६) पुत्रों का ज्येष्ठ कानिष्ठ्य (४५०)।

भोगिनी (४५१)। भर्मणा, वा वातादि पत्नियों का वर्णन (४५६-४६४)। धर्मपत्नी से उत्पन्न शिशु का ही स्पर्श मात्र कर्तृत्व (४६५-४७१)। सन्निधि भी स्पर्शमात्र कर्तृत्व (४७२-४७४)। श्राद्धादि में अत्यन्त वृत्तिकर पदार्थ (४७५-४८१)। गौरी दान वृषोत्सर्ग व पितरों को अत्यन्त वृत्ति कर कहे हैं (४८२-४८३)। जकारपञ्चक का वर्णन (४८४-४८५)। ग्रहण श्राद्ध का लक्षण (४८६-४८६)। पनस स्थापित महान् विशेष है (४८६-५०३)। अलर्क श्राद्ध (५०४-५०८)।

श्राद्धार्हदिव्यशाकवर्णनम्

३००३

श्राद्ध के योग दिव्य शाक (५०६-५३०)। पनस की महिमा (५३१-५७१)। रोदन का फल (५७२-५८५)। उर्वारु महिमा (५८६-६०३)। उर्वारु को छोड़ने में दोष (६०४-६०५)। छियानवे श्राद्धों का वर्णन (६०६-६१६)। १०८ श्राद्ध प्रकृति श्राद्ध, दर्श श्राद्ध, दर्श और आब्दिक समान हैं मन्वादि श्राद्ध, संक्रान्ति श्राद्ध, संक्रान्ति पुण्यवास (६२०-६४८)। अन्न श्राद्ध में कुतप (६४९-६५४)।

दर्श संक्रान्ति आदि श्राद्ध (६५५-६५७)। महालय

(६५७-६५६) । श्राद्ध देवता (६६०-६६४) । पित्र्य कर्मों में प्रदक्षिणा न करे । शून्य ललाट रहे गृहालङ्कार भी न करे (६६५-६६७) । मातृवर्ग में प्रदक्षिणादि व अलङ्कार (६६८-६७०) । श्राद्धभेद से विश्वेदेव, सापिण्ड वर्णन (६७१-६७५) । आशौच दश, तीन और एक दिन रहता है (६७६-६८३) । अमादि श्राद्ध में कर्तव्य (६८४-६८७) । एकोद्दिष्ट के अधिकारी (६८८-६९३) ।

अपिण्डक और सपिण्डक श्राद्ध (६९०-६९३) । छियानवे श्राद्धों की संख्या का विचार (६९४-७००) । महालय, सकृन्महालय में भरण्यादि की विशेषता महालय का काल, यतियों का महालय, दुर्मृतों का महालय (१०१-७०६) । सुमङ्गली का श्राद्ध (७१०-७१६) । महालय से दूसरे दिन तर्पण (७१७-७१८) । रवि के उदय से पूर्व तर्पण (७१९) ।

निमन्त्रणार्हविप्राणां वर्णनम्

३०२५

जीवत्पितृक श्राद्ध (७२०-७२२) । श्राद्ध में वैदिक अग्नि के अधिकारी (७२३-७२६) । अष्टकामासिक श्राद्ध (७२७-७३२) । श्राद्ध प्रयोग में निमन्त्रण के योग्य व्यक्तियों का वर्णन (७३३-७३६) । वेदहीन को निमन्त्रण देने पर निषेध एवं प्रायश्चित्त (७३७-७४०) । अपने

शाखा के ब्राह्मण की ही श्लाघ्यता (७४१-७४२) ।
 श्राद्ध में अभोज्य (७४३-७६८) । वरण (७६६-७७४) ।
 प्रसाद के लिये दर्भदान (७७५-७७६) । मण्डल पूजा
 (७७७-७७९) । गुल्फों के नीचे धोना (७८०-७८१) ।
 आचमन कर्ता के पहले भोक्ता का आचमन देवादि के
 भोजन की दिशा वरणत्रयकाल, विष्टर, अर्घ्य, आवाहन
 गन्धाक्षतादि दान (७८२-८०१) । अग्नौकरण फिर
 सङ्कल्प परिवेषण (८०२-८१७) ।

परिवेषणे पौर्वापर्यवर्णनम्

३०३३

पौर्वापर्य में पहले सूप देना (८०८-८१४) । रक्षोघ्न
 मन्त्र यदि असमर्थ हो तो दूसरे द्वारा बोला जाय
 (८१५-८१८) । गरम ही परोसना चाहिये (८१९-
 ८२५) । मन्त्र बोले जाय मन्त्रों की विकलता नाश
 के लिये वेद का घोष (८२६-८४८) । शास्त्र विरोधि-
 त्याज्य हैं (८४९-८६०) । तिलोदक पिण्डदान नमस्कार
 अर्चन, पुत्रकलत्रादि के साथ पितृ आदि की प्रदक्षिणा
 व नमस्कार (८६१-८६८) । मध्यम पिण्ड का परि-
 मार्जन कर धर्मपत्नी कां दे दे (८६९-८७२) । श्राद्ध
 दिन में शूद्र भोजन निषिद्ध (८७३) । पिता के भोजन
 के पात्र गाड़ दिये जायं (८७४) ।

श्राद्धे निमन्त्रितब्राह्मणपूजनवर्णनम्

३०४१

उद कुम्भ (८७५-८७७) । प्रथम वर्ष तिल तर्पण न करे
 सपिण्डीकरण के बाद श्राद्धाङ्गतर्पण (८७८-८८२) । श्राद्ध
 में निमन्त्रित ब्राह्मणों की पूजा का वर्णन (८८३-८९२) ।
 पितरों के निमित्त रजत और देवता के निमित्त स्वर्ण मुद्रा
 दे । उपस्थान और अनुब्रजनादि का कथन (८९३-८९७) ।
 कर्म के मध्य में ज्ञानाज्ञानकृत दोष का प्रायश्चित्त (८९८-
 ९०४) । उच्छिष्टादि श्राद्ध में सात पवित्र (९०५-९०६) ।
 उच्छिष्ट, निर्माल्य, गङ्गामहिमा, महानदी, नदियों का
 रजस्वलात्व, पुण्यक्षेत्र (९१०-९४२) । वमन (९४३-
 ९४५) । फिर श्राद्ध प्रकरण (९४६-९५०) ।

अनुमासिक में उच्छिष्ट वमन में व उच्छिष्ट के उच्छिष्ट
 स्पर्श में विचार (९५१-९५६) । एक दूसरे के स्पर्श में
 (९६०-९६४) । दर्शादि में छींक आने पर विचार
 (९६५-९७३) । अपुत्र की असापिण्ड्यता (९७४-९७५) ।
 पति के साथ अनुगमन में पत्नी का एक साथ ही
 पिण्डदान (९७६-९७८) । मृत के ग्यारहवें दिन या दूसरे
 दिन सहगमन में श्राद्ध (९८३-९८८) । यदि पत्नी
 ऋतुकाल में हो पति के मरण पर तो पति को तैल की
 कड़ाही में छोड़ दे और शुद्ध होने पर ही और्ध्वदेहिक

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

संस्कार करे (६८६-६६५) । उसका पिण्ड संयोजन (६६६) ।

अन्यगोत्रदत्तकपुत्रकृत्यवर्णनम्

३०५३

माता के सापिण्ड्य न होने का स्थल (६६७-६६८) ।
दत्तपुत्र का पालक पिता का सापिण्ड्य होता है (६६९) ।
दत्तपुत्र का औरसपिता के प्रति कृत्य (१०००-१००५) ।
अन्य गोत्र दत्त का सपिण्डीकरण में विधान (१००६-
१००८) । कथावृत्ति (१०१६-१०२१) । श्राद्ध दिन
में वर्ज्य (१०२२) । श्राद्ध के दिन दान जप न करे
(१०२३-१०२७) । दर्श में मृताह के श्राद्ध को पहले
करे (१०२८) । मृताह के दिन मातामहादि का श्राद्ध
हो तो मन्वादिक श्राद्ध करे (१०२९-१०३१) ।

मृताह में नित्यनैमित्तिक आ जाय तो नैमित्तिक पहले
करे (१०३२-१०३४) । दर्श में बहुश्राद्ध हों तो
दर्शादि को कर फिर कारुण्य श्राद्ध करे उसमें मत-
मतान्तर (१०३५-१०४४) । किन्हीं का कल्प प्रकार
(१०४५-१०५६) । अष्टक्रिया का विधान, पतित की
पच्चीस वर्ष के बाद क्रियायें हों (१०६०-१०७२) ।
श्राद्धाङ्ग तर्पण दूसरे दिन (१०७३-१०७५) । उद्देश्य
त्याग के समय सव्यविकिर न करे (१०७६-१०७८) ।
वसन में कर्ता के भोजन न करने पर अर्घ्य वृत्ति, तिल

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

द्रोण का विधान, दर्शश्राद्ध तर्पण रूप से तिल ही मुख्य हैं। सभी कर्मों में जल की प्रधानता (१०७६-१११३)।

॥ आङ्गिरसस्मृति के पूर्वाङ्गिरसम् की विषय-सूची समाप्त ॥

आङ्गिरस (२)

उत्तराङ्गिरसम्

- १ धर्मपर्वत्प्रायश्चित्तानां वर्णनम् ३०६६
विधि: (१-१०)।
- २ परिषद् उपस्थानलक्षणम् २०६७
परिषद् के उपस्थान का लक्षण और उसके सामने निर्णय पूछने की विधि (१-१०)।
- ३ प्रायश्चित्तविधानम् ३०६८
सत्य की महिमा व किये गये कुकृत्यों के लिये सत्य बोलकर प्रायश्चित्त पूछने का विधान (१-११)।
- ४ परिषदलक्षणवर्णनम् ३०६९
प्रायश्चित्त का लक्षण (१-२)। परिषत् का लक्षण और उसके भेद (१-१०)।

- | अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|--|-----------|
| ५ | प्रायश्चित्तनियन्तृकथनम् | ३०७१ |
| | दशावरापरिषद् (१) । चतुर्वेद्य (२) । विकल्पी (३) । अङ्गवित् (४) । धर्मपाठक (५) । आश्रमी (६) । ब्राह्मणों की परिषद् आगे प्रायश्चित्त नियन्ताओं का वर्णन बताया है (१-१४) । | |
| ६ | प्रायश्चित्ताचारकथनम् | ३०७२ |
| | प्रायश्चित्त के आचार का वर्णन (१-१५) । | |
| ७ | पापपरिगणनम् | ३०७३ |
| | जानते हुए भी प्रायश्चित्त का विधान पूछने पर ही करे (१-२) । पापपरिगणन (३-७) । पञ्चमहापात-कियों का वर्णन (८) । पतितों का वर्णन (८-६) । | |
| ८ | शूद्रान्नस्य गृहितत्ववर्णनम् | ३०७५ |
| | प्रतिग्रह में प्रायश्चित्त (१) । शूद्रान्न के भोजन में प्रायश्चित्त (२) । शूद्र की प्रशंसा कर स्वस्तिवाचन में प्रायश्चित्त (३-५) । प्रतिग्रह लेकर दूसरों को दे दे (६) । शूद्रान्नरस से पुष्ट वेदाध्यायी का प्रायश्चित्त (७) । शूद्रान्न छै मास तक खाने से शूद्र के समान हो जाता है एवं मरने पर कुत्ता होता है (८) । सारी उन्न खानेवाले को भी शूद्र ही होना पड़ता है (९) । प्रति- | |

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

ग्रहकेयोग्यधान्य (१०-११) । पात्र से लेना चाहिये
प्रतिग्राह्य वस्तुयें (१२-२०) ।

६ अभक्ष्यभक्षणप्रायश्चित्तम्

३०७७

अभक्ष्यभक्षण का प्रायश्चित्त (१-८) । भिक्षुकों की
गणना (९-१०) । कुत्ते से काटे हुए का प्रायश्चित्त
(११-१६) ।

१० हिंसाप्रायश्चित्तकथनम्

३०७८

हिंसा का प्रायश्चित्त वर्णन (१) । दण्ड का लक्षण
(२) । गौओं के प्रहार करने से प्रायश्चित्त (३) ।
गायों के रोधनादि से मरने पर प्रायश्चित्त (४-५) ।
गायों की हड्डी आदि मारने से टूटने पर प्रायश्चित्त
(६-१०) । किन-किन अवस्थाओं में प्रायश्चित्त नहीं
लगता उसका परिगणन (११-१४) । गजादि प्राणियों
की हिंसा में प्रायश्चित्त (१५-१६) । काम और
कामादिकृत पापों के प्रायश्चित्त के लिये विशेष वर्णन
(१६-१८) । बालक वृद्ध और स्त्रियों के लिये प्राय-
श्चित्तविधि (२०-२१) ।

११ गोवधप्रायश्चित्तकथनम्

३०८१

गोवध करनेवाले का प्रायश्चित्त वर्णन (१-११) ।

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

१२ कृच्छ्रादिस्वरूपकथनम्

३०८३

प्रायश्चित्तविधि (१-४)। कृच्छ्रादि का स्वरूप
कथन (५-८)। ब्राह्मण महिमा—

समस्तसम्पत्समवाप्तिहेतवः समुत्थितापत्कुलधूमकेतवः।
अपारसंसारसमुद्रसेतवः पुनन्तु मां ब्राह्मणपादपांसवः॥
(६-१६)।

आङ्गिरस (२) के उत्तराङ्गिरस प्रकरण की विषय-सूची
समाप्त।

भारद्वाजस्मृति के प्रधान विषय

१ भारद्वाजस्मृति सन्ध्यादिप्रमुखकर्मविषये

भृग्वदिमुनीनां प्रश्नः

३०८५

भारद्वाज मुनि से भृगु, अत्रि, वशिष्ठ, शाण्डिल्य,
रोहित आदि महर्षियों ने नित्यनैमित्तिक क्रियाओं को
लेकर प्रश्न किया (१-७)। उन्होंने बतलाया कि नित्या-
नुष्ठानों के न करनेवालों की सभी क्रियायें निष्फल होती
हैं। दिशाओं के निर्णय से लेकर प्रायश्चित्त तक
२५ अध्यायों का संक्षेप से निरूपण (८-२०)।

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

२ दिग्भेदज्ञानवर्णनम्

३०८७

पूर्व, पश्चिम, उत्तर एवं दक्षिण दिशाओं के ज्ञान की सरलविधि (१-४)। अन्य दिशाओं का परिज्ञान प्रकार (५-७७)।

३ विष्णूत्रोत्सर्जनविधिवर्णनम्

३०६४

मलमूत्र विसर्जन की विधि (१-८)।

४ आचमनविधिवर्णनम्

३०६७

आचमन के पूर्व जङ्घा से जानु तक या दोनों चरणों को और हाथों को अच्छी प्रकार धोकर आचमन का विधान (१-५)। जल में खड़ा हुआ जल में ही आचमन करे, जल के बाहर हो तो बाहर (६-७)। अंग-न्यास, देवताओं का स्मरण, आचमन कितना लेना चाहिये, बिना आचमन के कोई कर्म फल नहीं देता अतः इसका बराबर ध्यान रक्खा जाय (८-४१)।

५—दन्तधावनविधिवर्णनम्

४००१

मुख शुद्धि के लिये दन्तधावन का विस्तार से निरूपण, दन्तधावन के लिये वर्ज्य तिथियां एवं समय तथा कौन-कौन काष्ठ ग्राह्य हैं तथा कौन-२ अग्राह्य हैं इसका निरूपण, मौन होकर दन्तधावन करे (१-२५)। स्नानविधि

अध्याय प्रधान विषय पृष्ठाङ्क
का वर्णन (२६-३८) । ललाट में तिलक का विधान
(४०-४५) ।

६ त्रिकालसंध्याविधानकथनम् ४००६

एक ही सन्ध्या के कालभेद से तीन स्वरूप—प्रथम काल की ब्राह्मी दूसरे की (मन्याह्न की) वैष्णवी तीसरे की रौद्री सन्ध्या कही गई है । यही ऋक्, यजु और सामवेदों के तीन रूप हैं । इनके नित्य ही द्विजमात्र को कर्तव्य इष्ट हैं । सन्ध्या की मुख्य क्रियाओं का विस्तार से परिगणन (१-६८) । गायत्री के जपविधान का कथन (६६-१४०) । गायत्री का निर्वचन (१४१-१६३) । जप यज्ञ की महिमा (१६४-१८१) ।

७ जपमालाया विधानकथनम् ४०२४

जपमाला का विधान और जपमाला की प्रतिष्ठा विधि । जप विधान में अर्थ का प्राधान्य और साथ में मनोयोग पूर्वक करने से ही इष्टसिद्धि मिलती है (१-१२३) ।

८ जपे निषिद्धकर्मवर्णनम् ४०३६

जप में निषिद्ध कर्मों का वर्णन (१-१२) ।

९ गायत्र्याःसाधनक्रमवर्णनम् ४०३८

गायत्री के साधनक्रम को जानने से ही सद्यः सिद्धि मिलती है अतः उसको जानकर जप किया जाय (१-५०) ।

| अध्याय | प्रधान विषय | पृष्ठाङ्क |
|--------|--|-----------|
| १० | गायत्र्या मन्त्रार्थकथनम् | ४०४३ |
| | गायत्री के मन्त्र का अर्थ का विस्तार से निरूपण (१-६)। | |
| ११ | गायत्र्याः पूजाविधानकथनम् | ४०४४ |
| | गायत्री का पूजा विधान (१-११८)। गायत्री पुष्पाञ्जलि का प्रकार (१११-१२१)। | |
| १२ | गायत्रीध्यानवर्णनम् | ४०५६ |
| | गायत्री का ध्यान वर्णन (१-६१)। | |
| १३ | गायत्रीमूलध्यानवर्णनम् | ४०६३ |
| | गायत्री का मूलध्यान और महाध्यान का वर्णन (१-४४)। | |
| १४ | पूजाफलसिद्धये द्रव्यगन्धलक्षणवर्णनम् | ४०६६ |
| | पूजाफल की सिद्धि के लिये नाना द्रव्य, गन्धलक्षण का विस्तार से निरूपण (१-६४)। | |
| १५ | यज्ञोपवीतविधिवर्णनम् | ४०७२ |
| | यज्ञोपवीत की विधि का वर्णन—निवीत और प्राचीनावीत का लक्षण। शुद्ध देश में कपास का बीज बोया जावे, उसके तैयार होनेपर ही ब्रह्मसूत्र को विधिवत् बनाया जाय। नाभि के बराबर ६६ छियानवे चार हस्ताङ्गुल प्रमाण से बनाकर शुद्ध मन से देवगण ऋषियों का ध्यान करते हुए इस ब्रह्मसूत्र को पहने (१-१५४)। | |

अध्याय

प्रधान विषय

पृष्ठाङ्क

१६ यज्ञोपवीतधारणविधिवर्णनम्

४१८७

शुद्ध होकर आचमन कर आसन पर बैठे फिर आचार्य, गणनाथ, वाणीदेवता, देवता, ऋषिगण और पितरों का स्मरण करे। भगवान्, ब्रह्मा, अच्युत और रुद्र को भक्ति से नमस्कार करे, नवों तन्तुओं में आवाहन कर यज्ञोपवीत का धारण करे (१-६३)।

१७ यज्ञोपवीतमन्त्रस्य ऋषिच्छन्द आदीनां वर्णनम् ४१६३

यज्ञोपवीत मन्त्र के ऋषि छन्द देवता आदि का विस्तार से वर्णन (१-३१)।

१८ सप्रयोजनकुशलक्षणवर्णनम्

४१६६

कुशों के बिना कोई भी नित्यनैमित्तिक क्रिया का सम्पादन शक्य नहीं अतः कौन सी ग्राह्य है और कौन सी अग्राह्य है इसका निरूपण (१-१३१)।

१९ व्याहृतिकल्पवर्णनम्

४२०६

व्याहृतियों का विस्तार से निरूपण (१-४८)।
व्याहृतियों से सम्पूर्ण कार्यसिद्धि शक्य है (४६)।

॥ भारद्वाजस्मृति की विषय-सूची समाप्त ॥